कविता में सुबह

मध्यप्रदेश साहित्य परिषद्
ई १३५/१ रवीन्द्र मार्ग,
भोपाल–४६२००२ (म. प्र.)

प्रथम संस्करण १९७८

मूल्य : बारह रुपये

विजय प्रिंटर्स
२४, नमकमण्डी
उज्जैन
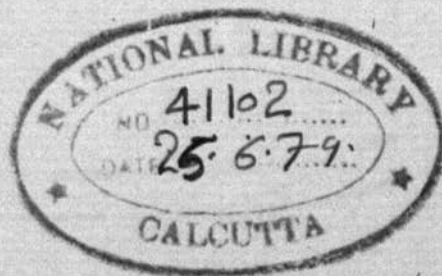
Kawita Mai Subaha (Poems) : Ramvilas Sharma

कविता में सुबह

रामविलास शर्मा

विंध्य के
सागौन वन को भेदकर
झील के
निष्कंप जल को लाँघ
चुन रही महुआ
आदिवासिन
उत्तरायण सूर्य की तिरछी
किरन

उग रहा
पूरब क्षितिज से
सांडनी के दूध जैसा
कुनकुना-सा
और मीठा
एक उजला दिन

रामविलास शर्मा

क्रम

रामविलास शर्मा के रचना-मन में प्रकृति के दुर्लभ, सांद्र और गतिशील बिम्ब बड़ी ही खूबी से टंक जाते हैं। कुछ तो सचमुच अप्रत्याशित, अछूते और बेजोड़ हैं। अगर यूं कहा जाय कि रामविलास प्रकृति के केन्द्र में मनुष्य और उसकी स्थितियों–यातनाओं और सुखों की खोज के लिए बेचैन कवि हैं, तो आसानी से कह सकते हैं। हमारे जैविक और मानवीय संसार के बारे में भी उन्हें जो कहना है, उसका उनके पास एक अत्यंत सशक्त माध्यम है–प्रकृति। इसलिए वे प्रकृति को तरह देकर, जहां कहीं सिर्फ युग-परिवेश को चित्रित करने की कोशिश करते हैं, वहां कुछ असहाय-से लगते हैं। साफ है कि प्रकृति उनके काव्य-मन में कितनी संश्लिष्ट है।

पिछली रोमांसिकता या तथाकथित छायावादी चेतना और गीति-संवेदन उनकी कविताओं में जरूर है, मगर वे उसे सजाते और गहरा बनाते हैं। इससे उनके प्रेक्षण और बोध में एक सांस्कृतिक गंध भी कहीं आ जाती है–जो एक वांछित सुख की तरह लगती है।

उनकी प्रकृति में केवल अनुकूल संवेदन ही नहीं, प्रतिकूल संवेदन भी है। इन तमाम उपादानों से रामविलास जो कविता रचते हैं वह उनकी निजी कविता होती है—बिलकुल अपना एक गहन व्यक्तित्व-स्पर्श लिए हुए। मनुष्य के सौन्दर्य-बोध, उसके उल्लास, उसकी यातनाओं और समय की विद्रूपताओं का ऐसा 'प्राकृतिक दस्तावेज' हिन्दी कविता में बेशक कुछ नया जोड़ता है। इस माने में वे हिन्दी के अनूठे कवि हैं।

ऐसे सशक्त कवि की पहली पुस्तक भी अब तक प्रकाशित न हो पाना हमारी जिस लाचारी या काहिली का प्रमाण-पत्र है-- उसकी सफाई देना बेकार है—जबकि मुक्तिबोध, हरिनारायण व्यास जैसे कवियों को भी इसका शिकार होना पड़ा हो! बहरहाल।

मध्यप्रदेश साहित्य परिषद् रामविलास शर्मा जैसे संवेदित, गंधवान, प्रयोग और संप्रेषण धर्मी कवि का पहला संग्रह प्रकाशित कर आपके हाथों सौंपने में एक गहरे संतोष का अनुभव करती है।

—प्रभाकर श्रोत्रिय
सचिव

सुना आपने

सुना आपने
चाँद बहेलिया
जाल रूपहला कंधे पर ले
चांवल की कनकी बिखेर कर
बाट जोहता रहा व्यथित हो
क्षितिज-शाख के बिलकुल नीचे
किन्तु न आई नीड़ छोड़कर
रंग बिरंगी किरन बयाएं
सुना आपने

सुना आपने
फाग खेलने
क्वाँरी कन्याएं पलाश की
केशर घुले कटोरे कर में लिये
ताकती खड़ी रह गई
ऋतुओ का सम्राट
पहन कर पीले चीवर
बुद्ध हो गया
सुना आपने

सुना आपने
अभी गली में
ऊँची ऊँची घेरेदार घघरिया पहिने
चाकू छुरी बेचने वाली
ईरानियों की निडर चाल से
भटक रही थी, लू की लपटें
गलत पते के पोस्ट कार्ड सी
सुना आपने

सुना आपने
मोती के सौदागर नभ की
शिशिर भोर के मूंगे के पट से छनती
पुखराज किरन सी
स्वस्थ, युवा, अनब्याही बेटी
उषाकुमारी
सूटकेस में झिलमिल करते
मोती, माणिक, नीलम, पन्ने, लाल, जवाहर
सब समेटकर
इक्के वाले सूरज के संग
हिरन हो गई, हवा हो गई
मोतो के सौदागर नभ की
बेशकीमती मणि खो गई
सुना आपने

देखा तुमने

देखा तुमने
रेवा के तट
दूर दूर तक फैल रही है
सिके मूंग के पापड़ जैसी
असमतल धरती निमाड़ की

और सामने
क्षितिज रेख पर
टूटे दाँतों की कंघी सी
खड़ी हुई है पल्लव-हीना
बेतरतीब कतार झाड़ की

उधर देखिये
अभी अभी गुस्ताख़ सवेरा
प्राची को बाहों में कसकर
गोरे मुखड़े पर बरजोरी
मलकर गया गुलाल

आम्र मंजरी की उत्तेजक

मुस्कानों के इर्द गिर्द
है डोल रहा उन्मत्त प्रभंजन
आवारा सा
सिर पर बाँधे सौरभ सना रूमाल
कुंकुम घुले झील के जल पर
स्वर्ण मेघ के बिंब तैरते
सुर्खाबों से पंख समेटे
नौजवान फसलों की
अगवानी कबूल कर
नाजुक टहनी से टेसू की
दूर देश के प्रियतम जैसे
बेकरार हो झौंके भेंटे

बिलम गये बछड़े सा कोई
बंसी का कोमल मोहक स्वर
भटक रहा
निर्जन घाटी में

सूरज
श्रद्धारत किसान सा
सत्वर गति से, सधे हाथ से
रोप रहा किरनों के पौधे
अंतरिक्ष की नम माटी में

बहस करते हुए लोग

कुछ लोग
बहस के दौरान उद्वेगित होकर
हो जाते हैं गुमराह
जैसे सुनसान पथ पर तेज़ भागती मोटर को
अचानक दचका लगे
और बाज़ू में उतर जाय

कुछ लोग बहस सुनते हुए
हो जाते हैं इतने आत्मस्थ, इतने तल्लीन
कि जैसे कोई नदी में डूबता व्यक्ति
तीसरी बार सतह पर दिखे
और गुम हो जाय

कुछ लोग
बोलते हैं शब्दों को टटोलते हुए
जैसे उतर रहे हों
पहाड़ का दुर्गम ढाल
और कुछ इतने तेज़, इतने तर्रार
कि जैसे घोड़े को एड़ लगाई

अगहन का एक दिन

अलस्सुबह
हवा
अखबार डाल जाने वाले छोकरे की तरह
दरवाजे पर देती है हल्की सी दस्तक
और
रोशनी की एक दुबली किरन
शुरू कर देती है टेम्प्रेचर लेना
ऊँचे दरख्तों की मुलायम टहनियों का

सधे कदमों
चलकर आती है शुभ्र वसना धूप
और क्यारियों में लेटी सेवंती का
करने लगती है हल्के-हल्के स्पंज

क्षितिज, बरामदा लांघ
चल पड़ता है
अपने नियमित चक्कर पर
डाक्टर सूर्य, सफेद लबादा टांग

एक दर्दनाक कराह

आत्महत्या के लिये प्रस्तुत
. असाध्य रोगी-सी
तीसरी मंजिल की खिड़की से लगाती है छलांग
आवारा पशुओं से अस्थिर विचार
मंडराते हुए
मन के अहाते के आस-पास
महसूसता
प्लास्टर में जकड़े
पलंग पर पड़े रोगी-सा
अगहन का एक दिन
अनमना और उदास

•

दोपहर

मई का पिघलता सूरज
उबलने लगा है
सुबह की दहकती हुई धमन भट्टी में
और
कानों पर रूमाल लपेटे
विवश पिंडलियाँ
ठेलती है जर्जर साइकिलें
दफ्तरों, दूकानों, कारखानों की ओर
चढ़ाई पर

पसीना पोंछते, पेबन्द लगे खाकी निकर को
कोसती है
रिक्शे में सवार थुल थुल महिला
गाड़ी छूटने के डर से बौखलाई, बदहवास
गर्म लू के झोंके
बेकार, आवारा, लफंगों की तरह
दिन दहाड़े राहगीरों से छेड़छाड़ करते
भटक रहे हैं--
नगर की प्रमुख सड़कों पर निर्द्वंद्व

नगर पालिका के नल से
टप टप टपकती बूंद
आतुरता से चोंच में समेटती चिड़िया
टपक जाती है पके गूलर सी
अचानक, एकदम खामोश
अजीब करिश्मा है
धूप जो संतरों को करती है पोला
और हिरनों को काला
प्रमाणित हो रही है बिलकुल निष्प्रभाव
हमारे स्वार्थ की मोटी त्वचा पर हर बार

निमाड़ की सुबह

ढाल पर अटकी हुई सी
झोपड़ी में मुर्ग बोला
रश्मियों ने क्षितिज प्याले में
नखूनी रंग घोला

सूर्य की पहली किरण ही
चुभ गई तन में सुई सी
बिंध गई अन्जन बबूलों में
हवा गाफिल हुई सी

ऊंगलियों में थाम घूंघट
पहिन घुटनों तक घघरिया
दीर्घ डग भर भील रमणी
चल पड़ी ले सिर गगरिया

सूद औ दर सूद सी
बढ़ती गई लम्बी डगर पर
आदिवासी
'दशमलव' सा ही दिखाई दे रहा भर

सज संवर काँसी कड़ों से
धूप पगडंडी उतरती
हो रही कुरबान हलकी नोक पर
सौ बार धरती

चौखट का चित्र

मुंह अंधेरे
खुली खिड़की के सिलेटी चौखटे में

कुहर लिपटे बादलों की पर्त में
बोझिल क्षितिज पर
बेंजनी पतली रिबिन सी
आसमां की एक चिन्दी

खुले पंजे की तरह पत्ते पसारे
पपीते के डंठलों के पार
मरक्यूरी के बल्व सा
बुझता हुवा मद्धम सितारा

नीम की नाजुक डगालों पर
फुदकता
सटोरों सा शोर करता
परिन्दों का झुण्ड
ओस का कोमल वजन
सर पर उठाये
झूमते से सुरजने के श्वेत-पीले फूल

शोख झोंको की शरारत से परेशां
प्रौढ़ महिला की तरह मुड़,
उठा उंगली डाँटती सी गुलमुहर की शाख

मुंह अंधेरे
खुली खिड़की के सिलेटी चौखटे में
अभी अगहन का सबेरा मल रहा है आँख

जंगल की दोपहर

सतपुड़ा के सुनसान जंगलों में
यहाँ से वहाँ तक
खड़े हैं नंगे पेड़
और बढ़ती जा रही है
मंहगाई सी
हर क्षण धूप में आँच
और वातावरण में उमस

नर्मदा को शीतल सतह को छूता हुआ
कोई झोंका पोंछ जाता है
दोपहर का जवान, सुर्ख चेहरा
सुकून देता हुआ
करों में राहत के आश्वासन की घोषणा सा

पराये खेतों में मुंह मारने के बाद
जुगाली करते, पसरे हुए हैं कुछ ढोर
इक्के दुक्के दरख्त की घनीं छांह में
और पूरा रेवड़
कर रहा है करुण चित्कार
अपने अधिकारों के लिये, चिलचिलाती धूप में

गिट्टियां फोड़ते हजारों हाथ
और तसले ढोते सैंकड़ों सिर
बदल रहे हैं पगडंडियों को सड़कों में
और जगा रहा है
सभ्यता का पसराव
जंगल की पसलियों में एक बेनाम दर्द

कितना सही है
कि आग उगलते सूरज के
जल्लो–जलाल के बावजूद
हर सिम्त
पलाश की नाज़ुक टहनियों पर
फूट रहे हैं
मुस्कराते मखमली बादामी कोंपल

झील की शाम

रांगोली रचे आँगन चरण घर
उतर आई झील तट पर
दिसम्बर की साँझ
ओढ़े जामुनी सा शाल

दूर झुरमुट से उठा है पंछियों का गोल
लंगर खोल
जैसे
बह चला हो किश्तियों का दल
अजाने तन गये नीलाभ नभ में शुभ्रपांखी पाल

विंध्य घाटी के घने
काज बनों की छाँह में
दबता–दुबकता
धूप की आखेट करता
आ रहा बढता अंधेरा

कुंकुमी जल की सतह पर
रच रही है किरन–कूँची
सुनहरी, केशर धुली सी

लहरियों का एक घेरा

भूरी, मटीली, साँवली
चट्टान सी बदली तले
चिपका हुआ है शहद छत्ते सा
अधूरा चाँद पीला

सर्द झोंको के नुकीले तीर खा
छलनी हुआ
लग रहा
दमक लगे से दुशाले सा

मौसम का गीत

अफीम के हरेकच्च खेतों में झूम उठे,
सुर्ख, श्वेत, बासंती रंगारंग फूल
साध्वी हवाओं ने टांग दिये खूँटी पर
संयम के सबके सब खोखले उसूल ।

बौराये आम तले, आ बैठी काँखों में–
हाथ दबा, जाड़े की उन्मन सी धूप
महुए की अचरज से उझक रही आँखों में,
तैर गया सरसों का सोनाली रूप

अध–बूढ़ी पीपल की कुहनी को छू जाता
हल्के से आँख बचा नटखटी बबूल

टेसू की गदरायी टहनी पर बैठा है,
ठोड़ी के गुदने सा शुभ शकुनी नीलकंठ
शतदल की सांसों के सौरभ से गंधायित,
सन्नाटा बेंध गया कोयल का मधुर कंठ

अधरों पर उग आयी शहतूती मुस्कानें,
आओ फिर दुहरा लें हम पिछली भूल ।

शालवनों में

छू रहे हैं शाल वन की फुनगियों को आज
फाख्तांओं के सिलेटी पंख से बादल

अधसुलगते पहाड़ों के दर्द का प्रतिबिंब
ढो रही है, पुतलियों में साँझ सिंदूरी
नदी कैंसरग्रस्त गृहणी की निराशा-सी
नापती है ज़िन्दगी से मौत की दूरी

अभ्रक खान में फिसली अचानक गेंतियों की नोक
बिजलियाँ नभ में चमक यों हो रही ओझल

बढ़ा आता भालुओं के झुँड-सा हिंसक अंधेरा
सहम चीतल-सी हुई अदृश्य ढलती धूप
विस्मृतियों के कुहासे-सी अपार्थिव धुँध में
घुल रहे हैं आकृतियों के पिघलते रूप

ऊंची पेंग भरते नीम की डालों डले झूले
लहरते युवा–कंधों से फिसल सतरंगिया आँचल

गोंड युवती की सरलतम खिल खिलाहट से
करोंदे की टहनियों पर खिले उजले फूल

करुण सीत्कार गूँजा टिटहरी का, चुभा हो जैसे
महावर रची, श्यामल, खुरदरी-सी पगतली में शूल

लौट आया हो अचानक युद्ध में लापता बेटा
बादलों को देख यों पछुआ हुई पागल

रात दूधिया

खिल आये हैं नभ क्यारी में
अजवाइन के फूलों जैसे
हल्के नीले उजले तारे

धरा बही पर फैल रहे हैं
स्याही के हल्के दागों से
पेड़ों के साये कजरारे

लहरों की बाहों में बेसुध
चाँद बतख सा तिरता–तिरता
संभल गया है क्षितिज ढाल पर
मेघ मेमना गिरता--गिरता

खुले बाल सी लघु लहरों पर
फिसल रही कंघी सी नौका

अंगड़ाई लेती बाहों सी
खिली रातरानी की शाखें
चूम गया आवारा झोंका

आज रंध्र में बाँसुरिया के

साँस सुरों के पाँव पढ़ रही
छोड़ बिरहवा, रसिया गा रे
रात दूधिया, पी आ जा रे।

अगहन की भोर

बिनौले के ढेरों से
मलेशिया टीलों के पार, उधर पूरब में
अनायास खिल उठी
सोनजूही, सेवंती, पीली, गुलदाउदी

अनचौरस, अध भीगे खेतों की कोंख से
अलसी के अँखुओं की अधमूंदी पलकों में
नीलम की नन्ही सी कनिया मुस्का उठीं

बाँस की टहनी पर बैठी बयाओं सी
सुनहरी किरनों का सहमा सा एक झुण्ड
अन समझे तनिक देर
खिड़की के बर्फीले शीशे पर चोंच मार
जंगले पर बैठ गया

झरबेरी झुरमट के
कांटो से कतराता, कँपता सा सर्द पवन
ठिठुराई उँगली से
मटियाले, अधपीले पत्तों को नोच-नाच

बेकाबू बच्चे सा

विन्ध्यां के सागौनी जंगल में पैठ गया

आदिम युग महिला सी
पत्तों से तन ढांके शरमाई पगडंडी
विहगों के बोल झरे
महुए की डाली से

धरती का रोम रोम भिगो गया
अनजाने
केशर का घोल
छलक सूरज की थाली से

बाँहो में सुगबुगाती सुबह

पुष्ट नितंबों पर
चमकती करधनी–सी
डामर की सड़क ले रही है घुमाव

बाजू में
घूरते खड़े हैं
बेतरतीब कतारों में
बेशरम के पेड़

कटे धान के उदास खेतों की मेड़ पर
आक के पौधे को उलाहना देती सी
पसर गयी है चरागाह में
चैत की धूप

मन
अभी तक भटक रहा है
महानदी के तीर
इमलियों की छाँह, अलावों के गिर्द
थिरकती अनुभूतियों में
जहाँ गई रात तक चलता रहा है

करमा—नृत्य

इससे पूर्व कि मैं महसूस करूँ,
शिराओं में ऊष्म स्पदंन
और होठों पर शहतूती मिठास
अचानक
मेरी बाँहो में आ गयी सुगबुगाती सुबह ।

छत्तीसगढ़ की शाम-एक

अभी अभी
अलस, श्लथ, थुलथुला दिन–धान विक्रेता
दृढ़ हथेली राउताइन साँझ से
दबवा रहा था पाँव

लुक छिपकर
निठल्ली धूप
हो गई अविकल समर्पित
अजनबी आगन्तुकों को

और अब धुंधले क्षितिज पर
बादलों के स्याह धब्बे दो
हाँफ कर
हो गये निश्चल
लदी गाड़ी में जुते भैंसों सरीखे

आ रही है
धान खेतों से निकल
एकवस्त्रा

आदिवासी तरूण महिला रात
बुढिया दाई सी
ठंडी हवा
थरथराते हाथ से सहला रही है
मेड़ स्थित अरहरों की पौध

आरंग नदी पर
गुजरता है बाँस–पुल
किरन बैसाखी लगाये चाँद

हरहरा कर
ढह गये संकल्प
इस विरल क्षण
जी लिया मैं
फिर तुम्हारी याद

छत्तीसगढ़ की शाम-दो

हाट बाजार कर
सूरज की डलिया सिर पर उठाये
लाल साड़ी में पिटी
शबर-वधू शाम
लौट गयी अपने घर

जहाँ उसका निठल्ला पति अंधेरा
शराब पी कर पीटेगा उसे
और
बेशुमार अधनंगे बच्चे
ताकते रहेंगे टुकुर टुकुर
टिमटिमाते सितारों की तरह

उसकी हिचकियाँ
अटक जायेगी खपरेल के बाँसों से
और आँसू
कोई देख पाये इसके पहले
ढरका देगी

विश्वस्त सहेली सी
आँगन में घुटने मोड़ बैठी
पत्तियाँ अरबी की

भूत भविष्य वर्तमान

यादों की ठठरी
सीने से चिपकाये
गमगीन बंदरिया सा
गुमसुम बैठा अतीत

अपने ही तुरत जने
बच्चे को मुंह में ले
बिल्ली सा दबे पाँव
गुज़र रहा वर्तमान

कगार पर खड़ी हुई
गर्भिणी कंगारू की
अनिर्दिष्ट छलांग सा
अनिश्चित भविष्यत् ।

सर्दियों की सुबह

मैदान में झुके खड़े
बूढ़े दरख्त की नंगी टहनियों पर
ठिठुर रहे हैं बेशुमार कौए
और
लोग, कछुओं के पंजों की तरह
खिड़की दरवाजों के पल्ले भीतर समेट
दुबक गये हैं
अपने अपने मकान, घर और घरोंदों में

ऊंघती इमारतों पर
टंगा हुआ सन्नाटा काँप रहा
मकड़ी के पुराने क्षत विक्षत जाले सा
और परिन्दे
सांस रोके हुए स्तब्ध
जैसे श्रद्धांजली अर्पण मुद्रा में
अपार जन–समूह

लगता है
नगर में लगा है 'कर्फ़्यू'

और सर्द हवाओं की सैनिक टुकड़ियाँ
संगीनदार बन्दूकें
कंधों पर उठाये
सड़कों पर लगा रही है गश्त ।

आज फिर मुझको

किरन हेमन्ती सुबह को
मल गई
सुघर चेहरे पर तुम्हारे
अंजुरी भर धूप

अचानक
फिर हमारे बीच
लगी गलने
सख्त बर्फीली शिलाएं
अजनबीपन की

किंचित टोह लेती सी
बेधती है
निर्निमेषित दृष्टि
विस्मृति के पारदर्शी कुहासे की पर्त

उग रही है
ज्वार के स्वादिष्ट भुनते दूधिया दानों सरीखे
ऊष्म अधरों पर
झिझकती स्निग्ध मुस्कानें

कर रही टोना
लहलहाती ईख सी
रोम रन्ध्रों से उमगती
हर सिंगारों की मुलायम गंध

चीन्हता सा
लग रहा है आज फिर मुझको
दिग दिगन्तों को समेटे बाहुओं में
यह तुम्हारा
सरल, निच्छल, निर्विवादित रूप

मांडव की शाम

मूंगिया पर्दे हटा
कनखियों से देख मुस्काती हुई
झींगुरों के ताल पर धीमे चरण धर
यह थिरकती नर्तकी सी शाम

विद्युत हंटरों की चोट से बिफरे हुए
चीत्कार करते
कुनमुनाते भालुओं से
स्याह झबरे मेघ

इन्द्रधनुषी तार पर
सन्तुलन साधे फिसलती
सारसों के पंख के छाते सम्हाले
नौसिखी कमसिन फुहारें

सूर्य का भारी निकल गोला
निडर हो
बाजूओं पर झेलता सा
पहलवानी क्षितिज

झील के तट, झुरमुटों की ओट

जोकरों सी
तेज तीखी सीटियाँ कसती हुई
क्षुब्ध एकाकी टिटहरी

साग वन के सीखचों के पार
मरियल शेरनी सी
पलक झपकाती हुई
सुस्त ढलती धूप

ठीक बीचों बीच स्थित
मकबरे का श्वेत गुम्बद
'रिंग मास्टर' की चमकती खोपड़ी सा
एकदम खल्वाट

अजब करतब कर रही है
खंडहरों के इस नगर में
शोख सर्कल गर्ल सी
यह साँवली सी शाम

अमरकंटक में शाम

बहुत बरसों बाद
बिसरी यात्रा की याद
बो गई है
पिंडलियों में दर्द
शिराओं में रिस रही है
पिघलती सी धूप
कान से टकरा रहे हैं
बियाबाँ में टनटनाती
घंटियों के स्वर
पीताभ पत्तों से लदे
सरई दरख्तों का घना वन
कहीं भीतर
बहुत भीतर
हरहराता है
घाटियों में घिर रहा
हल्का मुलायम सा अंधेरा
कहाँ हैं कंधे ?
बोझ डाले गुजर जाऊँ

छाँह डूबी इन अलस पगडंडियों से
कपिल धारा का मुहाना
और कितनी दूर ?
कितनी दूर........ ?
कितनी दूर........ ?

यादों के सेमीकोलन

सोचो तो
मुंडेर की भूरी गर्दन पर
मंगलसूत्र की तरह पड़ती
सूरज की पहली किरण
जब स्नेह से सहा रही हो
तुम्हारे स्याह नम केश
जिनसे पानी की बूंद अब झरूं, अब झरूं
ऐसे में
अचानक आकर
मैं अपने ग्रहण लगे साये से
तुम्हें कैसे चौंका दूं, क्यों न डरू

तुम्हारे घर के
ढलान की पगडंडी पर
बरबस उठते मेरे पैरों को
विचारों की यही रास
आज तक थामे हैं

जिन्दगी का वाक्य

जाने कहाँ
निरंथक ही हो गया होता समाप्त
पर उसमें कई मधुरिम
यादों के सेमीकोलन
सुख दुख के कॉमे हैं

आँखो झरे पलाश

अंग अंग दहके गुलमोहर आँखो झरे पलाश
थकी जिन्दगी बाँस वनों में, करती छाँह तलाश

अमराई की सघन छाँह में
चलते ज़ुल्म दमन के चर्चे
गर्म हवाएं बगावतों के
बाँट रही गलियों में पर्चे

तिरछे हैं तेवर किरनों के
सहमे हुए झुण्ड हिरनों के

हिम शिखरों से टूट रहा, हर झरने का विश्वास
थकी जिन्दगी बाँस वनों में, करती छाँह तलाश

चिढ़ा रही सेमल को, टहनी
लकदक फूले अगलतास की
अब तक नाप न पाया मरुथल
दूरी मृगजल और प्यास की

बदगुमान हैं लू के झोंके
हरियाली चुप सांसे रोके

युग की पुतली में सिमटा सा, सहमा सा उल्लास
थकी जिन्दगी बाँस वनों में, करती छाँह तलाश

सावन संध्या

सावन की संध्या में दीपित नक्षत्र एक
बदली के जूड़े में बेले का फूल

लौट गई देहरी की सीढ़ी से झुँझला कर
प्रौढ़ा पड़ोसिन–सी मुरझाई धूप
रिमझिम फुहारों में निखर उठा अनायास
अधभीगी जूही का अनदेखा रूप

पछुवा हवाओं के कंधे से फिसल फिसल
दशों–दिशा लहराये सौरभ दुकूल

सागौनी जंगल में स्निग्ध धवल निर्झर सी
कौंध गई बिजली की दुबली सी रेख
पूरे जलाशय में एक फूल सरसिज ज्यों
कांसे के थाल जड़ी तांबे की मेख

उच्छृंखल नदियों ने शह पाकर सावन की
तोड़ दिये संयम के रस्मी उसूल

रात भर

रात भर झरता रहा
बेहद पुराने शामियाने सा
सिलेटी बादलों की अनगिनत पर्तों मढ़ा आकाश

रात भर अटका रहा
टिमटिमाते कुमकुमों के गिर्द
खंडित आस्था सा पतंगों का खोखला विश्वास

रातभर जगता रहा
पहरा लगाए द्वार पर
कुनमुनाता वृद्ध चौकीदार सन्नाटा

रात भर लगता रहा
हर एक झोंके को हवा के
दर्द का स्वर झींगुरों की साँस ने बाँटा

रात भर घिरता रहा
खामोश कमरे में
परछाइयों की धुंध सा अनमना अवसाद

रात भर तिरती रही
बीते दिनों की झील पर
सिंघाड़े की बेल सी केवल तुम्हारी याद

भाऊ समर्थ के चित्रों को देखने के बाद

देखा है मैंने

क्षितिज पर पद्मासन लगाए
लावा उगलता ज्वालामुखी
और
सैंकड़ों साल बाद
उसके मुहाने के इर्द–गिर्द
दूर तक फैली विभिन्न वर्णी मनोरम् मिट्टी

भादों के काले स्याह आकाश में
कौंधती बिजली को गुम होते हुए
पठान कालीन ईमारतों की खंडित पसलियों में

भयंकर झंझावात की चपेट में हरहराता
कराहता, असहाय, विशाल शाल वन

धवल चाँदनी में
सिवार आच्छादित तालाब के तट
चहल कदमी करता अनमना, उदास, सन्नाटा

और
ओढ़े हुए संत्रास से आर्तनाद करती सभ्यता को
तूलिका के हल्के से स्ट्रोक से बेनक़ाब करती
मानवीय संवेदना

देखा है मैंने
इन चतु:आयामी चित्रों में
यह सभी एक साथ

देखा है मैंने

श्रवण कुमार

श्रद्धालु बेटे से कजरारे बादल के
कांधे पर झूल रही
सतरंगी काँवड़ में
एक तरफ अंधी माँ

(बरखा)
जो बरस गई
कभी कहाँ, कभी कहाँ।
एक तरफ अंध पिता

(सावन)
जो देख रहा,
हरा यहाँ हरा वहाँ।

सुबह के चार चित्र

रात बुढ़िया
हाथ में ले
चाँद की कंदील धुँधली
काँपती-सी, हाँफती सी
विंध्यागिरि की
उन नुकीलो, उन कटीली
ओस भोगी, चोंटियों के पार
सर्पाकार पगडंडी उतरकर
हो गई ओझल

चुग गया सारे सितारे
ज्वार, मकई, बाजरे से
चोंच खोले
सुर्ख कलगीदार मुर्गा— यह सवेरा
फड़फड़ाकर हो गये चुप
पंख के बादल

मारकर बर्छी गगन से आ रही है
कलश गुम्बद मुंडेरो पर मचलतो सी

फुनगियों से फिसलती सी
किरन की पोशाक पहने
रोशनी तैराक युवती
स्निग्ध, चपला, स्वस्थ, मांसल

सुन खुरों की सहज आहट
कृषक की टचकार
घण्टों की सुपरिचित टनटनाहट
पंथ जागे, खेत जागे
बीज ने पलकें उघारो और देखा
झील की उर्मिल सतह पर
रास के रमिया सरीखें
झूमते शतदल

अंगराग

विंध्या की अंजुरी में
संध्या की
वासंसी मंजरियों-सी कोमल
अंगुलो ने छोड़ दिया
सूरज करील पुष्प

छिटक दिया चन्दन-सा
सरसों का मृदु पराग
चिड़ियों का झुण्ड उड़ा
बिखर गये अक्षत कण
फैल गया कुँकुम सा
टेसू की गदराई टहनी का अंगराग

गूँज उठे मंत्रों से
कोयल के मीठे स्वर
समई-सो
सुलग उठी, महुए की शाख-शाख

नर्मदा घाटी की शाम

विन्ध्य के
मजबूत मांसल स्कन्ध पर
बैठा हुआ है
पर समेटे, सुगबुगाते
पालतू तीतर सरीखा
कत्थई बादल

मंजराई मकई के
पलवाँ खेतों की मेड़ों पर छितरे
महुए की भीगी छाया में
गर्दन मोड़ पीठ खुजलाती
खड़ी हुई सारस की जोड़ी

सन्यासी के घुटे शीश से
टीले के उस पार क्षितिज पर
तँबियाये सूरज ने अपने
थके अश्व की रासें मोड़ी

आज आँख में गहरा काजल
ओढ़ बैंजनी चूनर बदली

चली आ रही लम्बे डग भर
तीरन्दाज पवन के पीछे

और धूप की पकी फसल पर
उतर रही है अन्तरिक्ष से
धीरे धीरे, धीरे धीरे
अंधकार की टिड्डी नीचे

महानदी की शाम

महानदी लाँघ
मुड़ गई सरई वनों में
दोर्घ डग भरती अकेली शाम

रह गया
लहरिल सतह पर थरथराता
सुर्ख महावर का तरल प्रतिबिम्ब

आँचल हटा कर
दूध पीते किलकते शिशु सा
उस किनारे
दूर टीले से सटा डोंगा

सिवारों के बीच
कागज कतरनों से
पंख फैलाए उतरते श्वेत बगुले

रेत में ठिठका खड़ा
निस्संग
एकाको अंधेरा

तुरत चटकी कली
कालर पर लगाये
दबे होठों
मुस्कराता बैंजनी आकाश

आषाढ़ का बादल

चार सौ चालीस मीटर दौड़ में
घोषित विजेता
प्रथम छात्रा की तरह
बेतहाशा हाँफती- सी
पसीने से तरबतर
गर्मियों की दोपहर

तक रही है
ललक नजरों से
क्षितिज की अलगनी पर झूलता
भीगे हुए टावेल सा
हल्का सिलेटी, अनछुआ
आषाढ़ का बादल

चटकते बाँध

बुझ गया है
बरगद तले जलता अलाव
और
खामोश हो गए हैं
मंजीरें खनकाते चौपाल

कुएं की जगत पर सुस्ताती
ठिठुरती हवा
पल्लू झटक
खिसक गई. रीते खलिहानों से
आहिस्ता - आहिस्ता

चटक रहे हैं
बचपन की यादों के बाँध

खपरैले हो गई है
एक दम धुआँ विहीन
और कच्चे घरों की दीवारें
पोतने में जुटा है चाँद

नीम तले जुगाली करते बैल
बाड़े में गाड़ी के नीचे कुनमुनाता कुत्ता
और
इस सब से परे
दूर बहती नदी का उदास, अवसाद डूबा स्वर
गाँव की सरहद लाँघ
उमेठ रहा है सन्नाटे के कान

एकाकी ऊबा मन

अरहर के मदमाते अंगो पर उबटन मल
अभी गई इठलाती तन्वंगी नर्म धूप
झीलों पर उतर रही अमलतास परछाँई
पोने को अधमूंदो पलकों का अलस रूप

बादल का बित्ते भर टुकड़ा कबूतर सा
संदेशा ले आया चुँचुक में थाम

एकाकी ऊबा मन, अगहन की शाम

घाटी के केसरिया कंधे को चूम डुबक
सटक गये सूरज को बनपांखी रहे टर
झरबेरी झुरमुट से तीतर का झुँड उड़ा
अलसी के खेतों पर मद्धम से स्वर बिखेर

ईख की ओट खड़ी हंसती हवाएं तक
रह रह कर दुहराती, एक वही नाम

एकाकी ऊबा मन, अगहन की शाम।

उत्तराधिकारी

यह बियाबाँ
सर्द, सूनी, सिहरती सी रात
डाक बंगले का अजाना हाल
बीच में चौकोन-टेबल पर
अगहन के ठिठुरते चांद जैसा
मौन मद्धम लेम्प

पाउडर पोते वयस्की चौखटों सा
वार्निश के नये भपके में चमकता
अनाकर्षक, जीर्ण फर्नीचर

पलंगों की झोल खाई
अनखिंची नेवार

पैर फैला, हाथ पीछे टेक
गर्भिणी सी पसर कर बैठी हुई
आराम कुर्सी

मध्यमवर्गीय सभ्यता के

पंजरों की यह नुमाईश
वसीयत में जिन्हें मिलनी है
शुक्र है, हम वे नहीं

खाँसता दिन

गेरूआ गोलार्ध
पर्वतों का क्षितिज हुक्के की चिलम सा
और उस पर
दहकते अंगार सा सूरज
थामकर सतरंग
झुरियों वाले अधर में
खींचता हैं खूब कश पर कश
खांसता कृषकाय बूढ़ा दिन

उगलता ढेर सारा धुआँ
रचना स्याह काली रात

टेसू फूले

अंग अंग में टेसू फूले, आँखों में रंगीन सपन
सुर्ख गुलाबी, श्वेत, बैंजनी जैसे फूल अफीम के
सरसों के पीले खेतों को दुलरा दुलरा शोख हवाएं
चुप बटौरती गंध और की, अमराई में आँख चुराएँ
कोयल के स्वर
घायल बतकों से उतरे तालाब पर
सब मंसूबे मिले खाक में जैसे किसी यतीम के

सेमल की हर शाख शाख पर दहक उठे ऐसे अंगारे
अनब्याही नौजवाँ ननद को जैसे भावज ताने मारे
याद आ गए भूले बिसरे
वे सब चुहल किलौल
अब तक जिनकी कुटिल हँसी अंकित होठों पर नीम के

वनकान्तर में पसरी मीलों तक महुए की गंध
आँचल ढरका धूप चैत की भटक रही निर्द्वन्द्व
डूब रहे सूरज को छूती
तिरछी बादल रेख
कलम कान पर टँकी हुई हो जैसे किसी मुनीम के

ज़िन्दगी

शीत लहर की चपेट में
ठिठुर रहा है समूचा शहर
किन्तु हमें
शहर से क्या लेना देना

सागौन के पुराने पत्तों से
जो हो गये हैं छोटे छोटे सूराख
तुम्हारे आत्मीय व्यवहार में
अब मुझसे नहीं होते बर्दाश्त

तुम
जाने कैसे सह लेती हो
शाल की तरह ओढ़ा हुआ
यह मौन
जो घिस कर हो चुका है तार तार

तुम्हारी अनासक्त आँखें
और आवेगहीन संस्पर्श
कब तक बाँध-कर रखेंगे मुझे

पतझर की बिदा के बाद
कभी भी आ सकता है बसन्त
किन्तु
तुम्हें कौन समझाये
ज़िन्दगी
संबंधों को जीना है
मात्र ढोना नहीं ।

आन्दोलन की प्रतीक्षा

श्रीनगर से त्रिवेन्द्रम
और शिलांग से चंडीगढ़ तक
हर समझदार शहर को
कुहरे–सा
अपनी गिरफ्त में कैसे हैं असंतोष

बैठक में टंगे
हिमालय के चित्र की शीर्षस्थ चोंटी तक
प्रस्तुत है उगलने को
अनवरत क्रुद्ध धुआँ

चौराहे पर दिन दहाड़े हत्या कर
अदृश्य हो जाने वाला अपराधी
हमारा ईमान
निकल आया है सड़कों पर
हथकड़ियों की तलाश में

पेशेवर अकर्मण्य
सिर फिरे कुछ लोग

बुनते हैं धार्मिक उसूलों के ताने बाने से
भाईचारे के कफन

परिवार नियोजन हो गया है रोशनी का
और अंधकार
टिड्डियों की तरह कर रहा है वंश संवर्धन

टिमटिमाते दीपक से लेकर
कई सौ मेगावॉट तक के विद्युत-गृह
हथेलियों पर सजाये
करते हैं स्वागत हम
आओ
आन्दोलित करो

लगता आज निरर्थक कितना

लगता आज निरंथक कितना, रतनजोत टहनी से
लिखना
लहर लहर पर महानदी के, रह रह तेरा नाम

याद अभी है वह चढ़ती वय
वह चुभता सा रूप
धान खेत में खिले अचानक
ज्यों कार्तिक को धूप

लगता आज निरंथक कितना अधरों पर अनुराग
सुलगना
घिरी हुई हो जब पलकों में शाल वनों की शाम

कोलाहल, संत्रास घुटन में
उलझ गई जिन्दगी ऐसे
घने जंगलों में पगडंडी
ठिठके और रास्ता पूछे

लगता आज निरर्थक कितना संकल्पों पर यों मर
मिटना
बीच राह में हरी उम्र जब अस्त हुए गुमनाम

वर्षा : एक

ट्रांसपोर्ट बेरियर के
बिगड़े मिज़ाज थानेदार की तरह
अड़ गया है इन्द्र
और बरस रहा है लगातार

परमिट क्लर्क की जेबों से भर गए हैं
लबालब तालाब
और नदी
उफन रही है अभिमान से
किसी गरीब लड़की सी
जिसने अलस्सुबह देखा हो सुनहरा ख्वाब

बेकार नौजवान के ढुलमुल इरादे सी
ढह गई मकान की कच्ची दीवार
बस्ती में घुस आये पानी पर तिरती है
कागज की नावों सी गुमटियों की कतार

प्लेटफॉर्म की धक्कमपेल में
हताश जेबकटे यात्री के चेहरे सा

टिमटिमाता है बिजली के खंभे पर
मद्धिम रोशनी वाला पीला कुमकुम उदास

आकाश में बिजली चमक कर हो जाती है अचानक
गोल

जैसे
सिनेमा से छूटती भीड़ में
किसी ने जमा दिया हो पीठ पर धौल
बरसता अनवरत मेह
भीग गई हड्डियों तक, पूरे नगर की देह

वर्षा : दो

हाथ में पत्थर उठाए
उमड़ आई
अनियंत्रित, आक्रामक बादलों की भीड़
ढंक गया सूरज
आँधियों ने कर दिया आरंभ—
लाठी चार्ज,
हो रहा पथराव
तड़ - तड़ातड़ - तड़
बरसते ओले
लहलहाती सब फसल होने लगी बरबाद
काल की गति प्रभावित
सह रहा वातावरण
छटपटाती क्रुद्ध पीढ़ी का विफल आक्रोश

सभ्यताएं सोच में है
किस तरह मढ़ दें
प्रकृति की कोख पर संपूर्ण अपना दोष

छलाँग

पगडंडियाँ
जब भी बदलती हैं
सीधी तारकोल सड़कों में
एक अव्यक्त दर्द उठता है
मेरी पसलियों में, मेरे सीने में

होता है
सुनसान जंगल की छाती में
एक भयंकर विस्फोट
कानों में उँगलियाँ देते हैं
हैरान बदहवास दरख्त

वैसे में
एक अबूझ छटपटाहट जीने लगता है
समूचा वातावरण
दफ्न हो जाता है
पंछियों का मधुर शोर
ट्रक बुलडोजरों की अनवरत गुर्राहट में

होटल की खपरेल से झूलती
धुआँ उगलती लालटेन
घबराई सी
घूरती रह जाती है अजनबी चेहरे
और बढ़ती हुई भीड़,
स्वार्थ की शीत लहर
झुलसा देती है
अपनेपन की लहलहाती पकी फसल

पूरी बस्ती पर छा जाता है
एक बेनाम तीखा नशा
बदलती हुई सभ्यता का
और भोलापन
रातों रात हो जाता है बदचलन

पगडंडियाँ
जब भी बदलती हैं
सीधी तारकोल सड़कों में

सिद्धान्त जीवी

चक्रवात में घिरे
चिड़ियों के समूह से असहाय

दुर्घटनाग्रस्त वायुयान के यात्रियों से
घबराये, परेशान

रेल्वे बेगन में ठुँसे
अनाज के बोरों से
परस्पर अपरिचित

चीटों की तरह
एक दूसरे की पीठ चढ़
समृद्धि की तलाश में भटकते हुए
लोग
जी रहे हैं ज़िन्दगी नहीं
केवल उसूल
वे भी उलजूलूल।

पुजापा भोगते पंडे

चिलचिलाती धूप
बेरोजगारी की तरह
दूर तक फैले हुए नंगे पठारों पर
अंतिम आस्था सा
सर उठाये खड़ा है सेमल

कँटीले तने से सट
सुस्ता रही है
एक दुबली छाँह
निरन्तर नौकरी की खोज से
हारी थकी
तीक्ष्ण बुद्धि, बेसिफारिश
डबल एम. ए. पास लड़की सी

उफनते विद्रोह का अंधड़
कंपाता है
खोखली जड़, वृद्ध सेमल की

कोई भी अनागत क्षण

कर सकता धराशायी
बढ़ रहा है दिन ब दिन
पैर पसराए मरुस्थल
कई बरसों से पुजापा भोगते पंडे
तय नहीं कर पा रहे हैं
वन महोत्सव का महूरत ।

कोई टोकता क्यों नहीं

हम सब तमाशबीन बने
देखते हैं,
जंगल में फैलती हुई आग
जलते हुए घोंसले
तड़कती हुई टहनियाँ
चटखते हुए बाँस
और इस सब के बीच
छलाँग भरता
अहंकारी उन्माद ।

हैरान हूँ
कोई टोकता क्यों नहीं
इन उच्छृंखल हवाओं को
जो दो नासमझ बाँसों को
आपस में टकरा कर
रच रही है
आग आग आग

भय

भय
रोशनदान में बैठे उल्लू की तरह
घूरता है मुझे
और मेरी धमनियों में प्रवाहित
खौलता रक्त
जम कर हो जाता है बर्फ।

चेतनावाहिनी नाड़ियाँ
महसूस करती हैं
एक तेज झटका
और मार्फिया का घातक प्रभाव
धड़कनों पर बैठ जाता है
पंजे गड़ाए
एक भरकम गिद्ध

आकांक्षा ठोकर खाकर
सहलाती है
घुटने का ताजा दर्द
और

सरपट भागते समय की
चिकनी पीठ से
फिसल जाते हैं मेरे हाथ

पपीतों के पेड़

मंहगाई
युकलिप्टिस के पेड़ की तरह
छू रही है आकाश
और खाली जेबों में हाथ ठूँसे
ठिठुरता खड़ा समूचा शहर
स्वीकार नहीं कर पाता है
अवांछित संतान सा
अरोमांचकारी उल्लास

परम्पराओं के बोझ से परेशान
लकीरों के फकीर
उमड़ आये हैं सड़कों पर
और अपना अस्तित्व जताने के लिये
एल्यूमीनियम के खाली कटोरे
बजा बजा कर
मचा रहे हैं अनवरत शोर

कितना निरीह हो जाता है
आदमी

संकल्प और साहस के अभाव में
कि पपीते के पेड़ की तरह
चाहे जब
उखाड़ देती है जड़ से
समय की तेज आँधी
उसे चारों ओर से झकझोर
सस्ते अनाज की दुकानों पर
लोग
केले के गाछ लगे

तरतीबवार फलों की तरह
रीते झोले लटकाये
खड़े कतारों में
शकर, किरोसिन और अनाज
दुबक गए हैं
भूमिगत गोदामों, तहखानो में
और जनता
खोज रही है उन्हें
फरार कैदी की तरह
भीड़ भरे चौराहों दुकानों, बाजारों में

मध्यमवर्गीय परिवारों के घरों की
दीवारों का पुराना पलस्तर
खा रहे हैं कुरेद कर चूहे
सुखे हुए कुओं और प्यासे तालाबों में

भटकती है आधी रात
कराहती हुई
अन्नदाताओं की उदास बेबस रूहें

चिलचिलाती धूप के बाद

परेशान हैं लोग
कि तीखी धूप ने
जंगली सूअर की तरह
रोंद रौंद कर
कर दी है चौपट
खेतों में लहलहाती
की सब फसल

और हम सब
ताकते रहे सूखे कुओं को निर्विकार
बैठक में दीवार पर टंगी
धूल जमी बन्दूक की तरह

यही सब होता रहा लगातार
और
सिले हुए होठों
तथा जंजीरों में जकड़े हाथो की
दुहाई देते

हम सब ढोते रहे
अपनी असमर्थता का अवांछित बोझ
लेकिन साक्षी है इतिहास
कि हर जुल्म की होती है अपनी एक हद

अचानक
समन्दर के गर्भ से उठा
एक बवंडर, एक तूफान
काले बादलों का एक झुण्ड
और ढंक लिया
उसने समूचा आकाश

फिर
वह अहिस्ता-अहिस्ता नीचे झुका
धरती से कानाफूसी की
और देखते ही देखते
फैल गई हर तरफ
यहां से वहाँ तक
चुनौती भरी हरिताभ मुस्कानें

प्रबोधचन्द्रोदयनाटक

प्रथम व द्वितीय भाग

जिसमें

नाटक की रीतिपर नट और नटी-काम और रति विवेक और सुमति-दंम्भ, दम्भशिष्य-अहंकार, मोह चारवाक, अज्ञान-क्रोध, लोभ-तृष्णा, हिंसा-भरमावती, मिथ्या-इनमें परस्पर अनेकानेक चित्रविचित्र वार्ताहुई है उसका वर्णनहै

जिसको

नाट्यरसरसिकपुरुषोंके चित्तविनोदार्थ पण्डित भुवदेवदुबे गढ़ाकोटासागर निवासि ने देशभाषामें अतिललित बनायाहै

प्रथमबार

79

लखनऊ

मुंशी नवलकिशोर (सी, आई, ई) के छापेखाने में छपा
अप्रिल सन् १८९४ ई० ॥

अष्टादशस्मृतियोंका इश्तहार ॥

आहा यह वही भारतवर्षहै जिसमें कि लोगधर्म्म-हीको अपना सर्वस्व समझतेथे सबकामोंको धर्मार्थही करतेथे और अपने सम्पूर्ण कालको इसी में व्यतीत करतेथे परन्तु आज उसी भारतबर्ष में कराल कालकी कुटिल गतिसे प्रायःसम्पूर्ण सनातन धर्म्मावलंबी अपनेअपने वर्णाश्रम धर्मों को धीरेधीरे छोड़ते चलेजातेहैं और इस नवीन शिक्षाके प्रबल प्रतापसे अपनेकोसर्वज्ञमानकर बिना जाने समझे अनेक अनेक प्रकार की कुतर्कणा करतेहैं जोविचार पूर्व्वक देखाजाय तो इस में उन विचारों का कोई दोष नहीं है क्योंकि हमारेसंपूर्ण धर्म्मग्रन्थ संस्कृत भाषाहीमें हैं और संस्कृत के पढ़ने पढ़ाने वाले बहुतही कमहैं इसलिये उन विचारों को संस्कृतज्ञ लोगोंका बहुधा साथ भी नहीं मिलता जिससे कि वह अपने धर्म्मकी बातोंको सुनभी सकें और यह स्वाभाविक बातहै कि बिनादेखे सुने किसी पदार्थ के गुण दोष को नहीं जान सक्ता बस इसीसे हमारे देशके नौ जवान लोग प्रायः अपने पुरखोंके संचितकियेहुए अमूल्य धर्म रूपी रत्नको काचके समान तुच्छ समझ कर गँवाय रहे हैं अब ऐसे महाशयों के लिये धर्म्म शिक्षा का सीधेसे सीधा उपाय विचारने से बहुधा यही मालूम पड़ा कि जोहमारे धर्म्मशास्त्रके ग्रंन्थोंका अनुवाद सकल गुण आगरी नागरी भाषा में कियाजाय तो यह लोग बहुत सरलता पूर्व्वक देखे

प्रबोधचन्द्रोदयनाटक

जिसमें

नाटककी रीतिपर नट और नटी, काम और रति, विवेक और सुमति इनमें परस्पर अनेकानेक चित्रविचित्र वार्त्ता हुईहै उसका वर्णन है

जिसको

नाट्य रसरसिक पुरुषों के चित्त विनोदार्थ पण्डित भुवदेव दुबे गाढ़ा कोटासागर निवासिने देश भाषामें अति ललित बनाया है

प्रथमवार
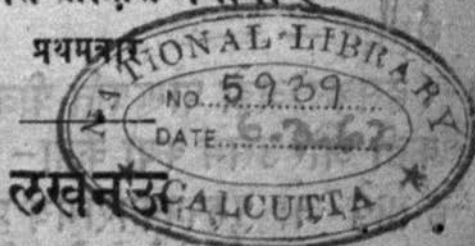
लखनऊ

मुंशीनवलकिशोर (सी,आई,ई) के छापेखाने में छपा

अक्टूबर सन् १८९३ ई० ॥

श्रीगणेशायनमः ॥

प्रथमांक

नाटक पात्र ॥

(कीर्त्ति ब्रह्मराजा गुपालमंत्री साधु समागम नट समाज)

वार्ता– कीर्तिब्रह्म महाराज की सभा में साधु समागम नामी नट और निज सहायक रूपयौवन गर्वित पुरुष स्त्री सहित संपूर्ण बीणा मृदंग सितार आदि यंत्रलेकर प्रवेश करते गान करनेलगे पश्चात् नट कहता है)

नट–(भुजा उठाकर कहताहै) अहो समस्त तंत्रीगणहो किंचित् समयपर्यंत यंत्रों को मौनकरके श्रवणकरो (फिर निज स्त्रीसेकहताहै) हेमृगनैनी कोकिलबैनी मेरीप्रिया आज महान् सुखदायक एक अद्भुत आकाश वाणी हुई है जिसके श्रवण करतेही मेरे शिरपर से अभिमान का भार गिरगया जिस से अब मैं पांय फैलाकर सुख पूर्वक सोताहूं—

नटी–(हंसकर)अहो प्राणपति प्रीतम कहिये वह बाणी किसने कही और उसमें क्या कहा–

नट–हे प्रिये जो पुरुषप्रकाशमय प्रसिद्ध अविगत अबिनाशी जगत प्रकाशी जिसके रोम रोम में ब्रह्मांड हैं और सबको सुखदायी सुखधाम सर्बव्यापक परमानंदहै और अकल अनीहअजअनंत भगवान्है जिसको नेति नेति कहि वेद गानकरते हैं और जिसकी आज्ञानुसार मायाने यहसंपूर्ण सासारिक प्रपंचरचाहै और जो अगुण अनूप सबंगुणरूप

अवर्णनीयहै जो बिनत्वक्स्पर्शी है-बिनापदके गमनकर्ता है बिनानेत्रों देखता है बिना श्रवणके सुनताहै बिना नासिकाके सूंघताहै बिनामनके गुनताहै बिन जिह्वा के स्वादलेताहै बिना शरीरके सुंदरहै बिना वाणीके बोलता है जो निज दासोंके निमित्त ब्रजवासी सगुणरूप होय बृंदाबनमें स्थितहुआ उसीने बिना वाणीके संपूर्ण दासों की कामना पूर्ण होने के निमित्त यह कहा है कि जो कीर्तिब्रह्म नाभी भूपति संपूर्ण राज कार्यानुरागी है तथापि उसने सांसारिक विषय मिथ्या समुझकर परमार्थ मार्गपर चरण रख मोह-जालके तोड़नेकी अभिलाषाकी परंतु इसीअन्तर्गत में गुपाल मंत्री ने फिरःराज्याशक्ति करा दिग्विजय करायदी तात्पर्य यह कि राज्य प्रपंच में फँसकर सतमार्ग को भूलगया इसहेतु तुम पंडित रायकृत श्रीकृष्ण भट्ट प्रकाशित प्रबोध चंद्रोदयनाटक भूपतिके सन्मुख गानकरो जिससे अभिमानादिकत्रयताप विनाश होकर नृपतिका हृदय शीतलहो शांतिकोप्राप्त होवे कारण कि पुष्पहीके प्रसंग में तिलतेल सुवासित होजाता है इस वाणीको श्रवण करतेही मैं सुख समुद्रमें मग्न होगया तिससे अब हे सुंदरी तू समस्त स्वांगनाटक संबंधी सज (यह सुनकर नटी कहती है)—

नटी—हे नाथ तुमने यह बहुत उत्तम कहा परंतु मेरी बुद्धि इसका अंतनहीं पासक्ती कारण कि महाराज की मति इस समय विषयासक्ति होकर शृंगार बीर रसमें फँसरही हैतो शांतिरस हृदयमें किसरीत प्रवेशकर सक्ताहैंजैसे सूर्य और रात्रि कदापि एकत्रनहीं होसक्ते वैसेही राज्यभोगमें शांतिरस नहींआता और ये राजा संपूर्ण भूपमणि पुत्र कलत्र मित्र सम्बंध्यादि राज्यैश्वर्यमें बंधरहेहैंतो एकही वार इस प्रपंचसे कैसे निवृत्त होसक्ते हैं इसकाउपाय यही

है कि समताको पकड़ सत्यको जाने सुख दुखको समान माने मान मोह अहंकार कामक्रोध को मेटै कुसंग छोड़ै समको साधै शब्दमें सुरतिलगावै शिरसे संतोंके समीप जावे इंद्रियोंको जीतै सांसारिक आशाको त्यागै परब्रह्म परमेश्वर से स्नेह लगाकर उसीके दर्शनोंका अभिलाषी रहै आपाको मिटादेवे इस प्रकार शिरको देकर तमाशा देखे तब संत होताहै नहीं तो क्या दूधका बताशाहै और जे पुरुष काम क्रोध लोभादिक विषयोंके आधीनहैं वह किस प्रकार शांतिको प्राप्त होसक्तेहैं—

नट—हे प्रिया तुमको इस प्रकारसे संदेह करना उचित नहीं है देखो बिना अधिकारी के कुछ करनहींसक्ते हैं—और यह मनस्वी शरीर जिससे संपूर्ण साधना सुलभ हैं महान् दुर्लभहै वेद इसरीतिसे वर्णन करतेहैं कि यह जीव सनातन परब्रह्म परमेश्वर का है परंतु—मायाके संयोगसे कुछफरक होगया और मायाके बसीभूतहोनेसे अनेकन योनियन में भ्रमण होताहै जब इसरीति ईश्वर जीवको भ्रमित्त औ श्रमित अवलोकन करताहै तब करुणाकरके यह नरतनु जो सर्व ज्ञानाधिकारी है देताहै इसको पाकर तीर्थव्रतादि शुभकर्म करना उचितहै यद्यपि बहुतकाल पर्यंत अभिमानादितम हृदयमेंरहतेहैं परंतु ज्ञानदीपके प्रकाशहोतेही दूर होजातेहैं और अब तो कीर्त्तिब्रह्म महाराज की सेनाने जबसे सम्पूर्ण कर्म बधकर महाराज को शत्रुरहित करके प्रजा सुखदायी करदियाहै तबसे उनकी यहइच्छा है कि सतसंगको पाकर प्रभूके चरणों में प्रीतिबढ़ाना चाहिये जिससे विवेक भूपति मोह नरनाहका दल जीतकर प्रबोध पुत्रउत्पन्न करै—

(यहांतक नटके वचन सुनकर परदाके भीतरसे काम का स्वांग बोलउठा)

काम–(महान्क्रोधकरके) अरे हे नीच नट तूने यह क्याकहा अरे मूर्ख तू महाराज मोह का द्रोह कहता है विवेक की क्या सामर्थ्य है जो जीतसके कारण कि जिनके हमसरीखे चढ़वायक हैं जिनके पुष्पहीके धनुष बाणहैं और संसारमें जितने स्त्री पुरुषहैं वह तो मेरेही गुणानुवाद के गानकर्त्ता हैं–और जगत्में जबलों मैंसजीवहूं तबलों मोह महाराज का सुखदायक हूं हमारे जीतेजी कौनऐसासामर्थ्यवानहै जो मोहको जीतसकै——

नट–(इतने वचन सुनतेही भयभीतहो निज स्त्री से कहता है) हे प्रिये यह काम महान्बली और विजयी महाराज मोह का मुख्य सेनापति है और मोहके सुकार्यमें इसकी महान् प्रीतिहै इसको महादेवजी ने भस्मतो कियाथा परंतु नहीं हुआ और इसने संपूर्ण संसारको जीतकर अपने वशमें करलियाहै इसीसे इसकीभय मुनीश्वर भी खातेहैं मैंने जो तुमसे मोहका हारना कहा उसीको सुनकर इसने ऐसा क्रोध किया है और संसारमें इसकी शंका सब करतेहैं इसहेतु अब अपुनको इहां रहना उचित नहीं है–

(इतना कह स्त्रीसहित नटभागा और परदासे
काम रति सहित सभा में आया
इस स्वरूप से)

सवैया–फूलनही के दुकूल महाछबि भूषण फूलनके सुख धामते । फूलनको शिर गुच्छलसे अरु कंदुकफूलनके कर बामते ॥ फूल शरासन शायकपाणि भुजारति ग्रीवर मे रसबामते ॥ ऐसो स्वरूप मनोभवको उठिआयो है मानोबसंतके धामते १ ॥

(प्रथम तो आतेही सभामें दोनों नृत्य करने लगे और नट समाज बतानेलगा फिर हंसकर स्त्री से कहता है)

काम–देखो हे प्रिया यह नीच नट सभाको छोड़कर किस ओर चलागया मेरेसन्मुख यह कहकर कि विवेक नेमोह महिपाल को जीतलिया कदापि वह इहांसे नहीं भागा होता तो आज मैं उसे मुख में भरलेता कारण कि स्त्री रूपी तरवारके द्वारा संपूर्ण सांसारिक जड़ और चैतन्य शरीर धारी मेरे वसीभूत हैं और देखो यह कृपाण कि-सरति की है कि जिसकी विचित्र मणि जटित आभूष-णों की मूठ है जिसमें नथरूपी नथनी पड़ी है और सुडौल नेत्रोंकी अंजनरूपी मरसानसे दोनों धारेंखीं-चींगई हैं और जिसकी यौवन अवस्थारूपी शिकल उबटनरूपी मंजन से की गई फिर सुगंधरूपी वस्त्रसे पों-छकर घूंघटरूपी म्यान में रक्खी गई सो जब इस प्रकार की मेरी स्त्रीरूपी तलवार चमचमाती है उस समय ऐसा कौन सधीरहै जो जगत में धीर्य धारण करसके तिसपर भी यह बसंत समय जिसकी पुष्पवाटिकों के ऊपर भ्रमर समूह गुंजार करते हुये मेरे यशगान करते से दीखते हैं फिर जिसकी शीतल मंद सुगंधित पवनसे विवेकियों का धीर्य विदीर्ण होजाता है और सुखदायी पराग के उड़तेही धीर्य ठहरहीन्नहीं सक्ता–कुहू कुहू बोल कोकिलों के सुनने से विवेककी सेनाके मुख सूखते हैं फेर विचित्र मंदिरों अटारियों में चंद्र किरणों सहित रात्री और कभी मेघोंकी घमंड और दामिनी की दमंक तथा जलके बरसने से चातक मयूरादिकन के बोलने से पवनकी झकोरोंसे वृक्षोंके डुलने से आभूषण वस्त्रादिकों की शोभासे केसर कस्तूरी इत्रादिकनकी सुवाससे षटरस भोजनों से जलके प्रक्षालन से–दर्पणों के प्रकाशसे नृत्य संगीतके अलापोंसे रागोंके मिलापों से मृदंगों के शब्दों से मति और सुरभेदोंके विचारों से कोमल निर्मल स्त्रियों

के स्पर्शसे तो मेरेही मेरेरसकी उत्पत्ति सबके हृदयमें होतीहै इसी विभूती को संपूर्ण मनुष्य चाहते हैं जो कदापि यह सुख एकही क्षणमात्र जिसको प्राप्तहोजावै तो फिर उसके विचारमें विवेक क्याहै–ज्ञानकौनहै पुराण किसको कहते हैं प्रमाण किसका नामहै यह सत्यवचनमैं तेरे शिर पर हाथरखके कहताहूं—

रति--हेप्रीतमप्यारे आपवीरों में महावीरहैं और-आपकी प्रभुता संसार में ऐसीही है और मोहभी महान् श्रेष्ठ राजा दयालु है परंतु विवेक महाराजको जो कठोर है मनुष्य महान् सधीर कहते हैं इनके परस्पर वैर स्वभाव होने से यदाकदा भलीबुरी बात होजायगी--

काम--(इतनासुन हँसकर कहता है) स्त्रियोंका स्वभाव सहजही सभयहोताहै यह मैंने निश्चय ज्ञानलिया इसी से तेरा हृदय कंपितहुआ परंतु कह तो सही त्रैलोकमें ऐसा कौनबली मेरे तुल्यहै जो मेरेबाणसे घायल नहींहै ऐसा कौन पुरुषहै जो स्त्रियोंके नेत्र कृपाणसे नहीं कटा इसके साक्षी वर्णन करताहूं सो श्रवणकरो प्रथम तो इंद्र जिसने मदांध होकर गौतम ऋषिका भेषलेकर उनकी स्त्रीसे छलकिया दूसरे चंद्रने गुरुपत्नीसे भोगकिया तीसरे जगत् पिता ब्रह्मा मेराबलपाकर निज कन्याके पकड़ने को दौड़ा फिर इतर सुर नर क्षुद्रजनों की क्या कथाहै ऐसा कौनहै जिसको मैंने कलंक नहीं लगाया और जिसको बांधकर मैंने मोहके स्वाधीन नहीं किया इसीसे महाराजको मेरा बड़ाही भरोसाहै और मुझे जीते बिना ऐसी किसकी सामर्थ्यहै जो मोह महाराजकी छांह दबासके जीतनातोदूर है तुम स्त्री स्वभावसे भयभीत होतीहो–

रति–(दोनोंहाथजोड़कर) अहो प्राणवल्लभ आपका ऐसाही पराक्रम सत्यहै और कोई ऐसा पराक्रमी नहीं है जो

आपको जीतसकै तथापि नीतिमें ऐसाकहाहै कि शत्रुका हीन न समझै दोहा॥ रारि रोग रिपु अग्नि ऋण नृपति तपोधन ब्याल।इतने गनियन छोटकरि सजग रहिय सब काल१॥और मैंने सुनाहै कि विवेक महाराजके साथ आठ मंत्री बड़ेही धीरबीर मतिके गंभीर स्वामिभक्तहैं उनमें से १ प्रथममंत्री यम है जिसके ये दश लक्षण हैं १ मनसा बाचा करके अहिंसा २ सत्यवचन ३ चोरी नहीं करनों ४ ब्रह्मचर्य में दृढ़ता रखना ५ सहनशील होना ६ सबै कार्य्योंमें धैर्यरखना ७ परमदयालुतालेना ८ मनसाबाचा कोमलचित करना ९ सर्व्वकाल पवित्ररहै १० मिथ्या अहार न करे २ द्वितीयमंत्री—नेम है जिसके ये लक्षणहैं १ जिह्वाके स्वाद न लेवै २ यथा लाभ संतोषरक्खे३सांसारिक सुखत्यागे ४ वेदमें विश्वासरक्खे ५ बिना फलकी इच्छाके दानकरे ६ सारबस्तुको ग्रहणकरै ७ बादाबिवाद न करे ८ संतों की कानमानै ९ लोकलज्जाका प्रमाण करे १० मानसी पूजनकरे ११ षोडश प्रकारसे प्रभूका ध्यानकरे १२ फेर जप में मौन रहकर अजपाका जपकरै १३ ज्ञानाग्निके बीचमें इंद्रियों का हवनकरे—३ तृतीय सममंत्री—उसके यह लक्षणहैं १ मनका निग्रहकरे २ योग का अभ्यासकरे ३ पद्मादिक आसन लगाय त्रकुटीमें दृष्टिराखै ४ पंचतत्त्वोंको साधकर मायाको निरोग करै—४चतुर्थ प्राणायाम मंत्री—इसको इड़ापिंगला सुषमना नाड़ियोंमें होकर पूरक कुंभक रेचक करके ध्यानकरै—५पंचम मंत्री प्रत्याहार—इसका यह लक्षणहै कि पांचों ज्ञानेन्द्रियों के पृथक् २ गुणशब्द स्पर्श रूप रस गंध इनको उलटकर बांधै—६ षष्ठममंत्री धारणा—उसके यह लक्षणहैं कि पांचों तत्त्वोंको भिन्न जानकर पांच घड़ी के प्रमाणसे एक एक में प्राणवायुको रक्खे—७ सप्तममंत्री ध्यान—यह महान्

सधीर और तेजस्वी है-इसमें परमेश्वर और गुरुके चरण कमलों को नेत्र मूंदकर अवलोकन करतारहै-८ अष्टम मंत्रीसमाधि है-इसपे सांसारिक उपाधि मेटनेपर आया भी मिटजाताहै फिर स्वामी और सेवकका भावनहीं रहता है और कालका स्वभाव भी व्याप्त नहीं होता है--

(ऐसेसभयरतिके वचनसुनकर)

काम०--(हँसकर कहताहै) हे प्रिये यह मंत्री मैंने आज पर्यंत नहीं सुने थे परंतु अब महाबीर बलवान जिन्होंने संसार को जीतकर मोहके स्वाधीन करदिया है उनका वर्णन सुनो--१प्रथमकाम--मैं ऐसाहूं कि जिससे सम्पूर्ण जक्त स्त्री रूपी रस्सी से बँधाहुआहै सुर नर असुर नाग पशु पक्षी कीट इत्यादि मेरेही मदसे अंधेहैं और जपीतपी संन्यासी मुनिवर परम विज्ञानमान जो बिवेकके सन्मानसे बनही में बासकरते हैं उनको भी यदि स्वप्नान्तरमें स्त्रीका स्मर्ण आजाताहै तो बिवेक की आकन्न छोड़कर मेराही यश गांण करने लगतेहैं--और जिनके स्थान नवयौवन स्त्री है वहतो मानों बिनादामों के मेरे चेरेहीहैं-२द्वितियक्रोध-- जिसको अवलोकन करके बिवेककी सेना दबती है और जिसके बशीभूत होकर संपूर्ण नरनारी विपरीत कहते और करतेहैं--३तृतियहिन्सा--अत्यंत भयंकर है ४चतुर्थ लोभ--महाराज मोहके समीप सुशोभित है जिसके स्वाधीनहोय सम्पूर्ण मनुष्य परमदीन अनाथसरी से फिरते हैं--५पंचममद--इसके समान दूसरा कोईनहीं है--६षष्टम मत्सर--इसका यह प्रमाण है कि दूसरे की बुराई देखकर बड़ाहर्षहो बहुतही कुटिलताई सुहावै दूसरेकी निंदाकरता रहै और कहांतक वर्णनकरूं सम्पूर्ण तनधारी इसीके आज्ञाकारी हैं मानों इसी के हाथ बिकचुके हैं--७सप्तमदंभ-- यह महानछली जिसका अभ्यंतर मलीनहै परंतु बाहरसे

परमउज्ज्वल बक सदृश मछलीका प्राणग्राहकहै इसकी वाक् रचनाके बशीकरनमें संपूर्ण जक्तके स्त्री पुरुष चकृत होरहेहैं--८अष्टमझूठ--इसमें तो मानों संपूर्ण संसारही लिपटरहा है जिससे जीव अनुमान व्यवहार अर्थ अनर्थ में ही बिना झूंठके कुछ बोले भी नहीं हैं —

सो हे प्रिये यह संपूर्ण मन्त्री ऐसेप्रबल हैं कि इसमें से एक एक संसारको जीतसक्ता है जिनके भय से ब्रह्मादिक सशंकित हैं और मुनि तो भयभीतहो बनसे वन करते हैं जो कदापि हम संपूर्ण एकत्र एक चित्तहोयँ तो विवेककी कितनी समाज है (जब इसरीतिसे मोहके मंत्रियोंका बर्णन कामने किया तब रति फिर पूंछती है)

रति०—हे प्राणपति सुनतेहैं कि बिवेक औरमोह दोनों एकही कुलमें उत्पन्न हुये हैं इसका सविस्तर वर्णनकरो—

काम०--हे प्रिये जो तुमने कहा यथार्थ में ऐसाही है एक कुल क्या येतो एकही पितासे दोनों भाई उत्पन्न हैं अब इन सहोदर भ्रातोंके बंशका बर्णन करताहूं सो सुनो जो ईश्वर सर्बघट निवासी अबिनासी स्वयं बिलासी है और जो जानानहीं जाता परंतु जिसकी प्रभुता सबकी सहायकहै और जिसको निर्गुण निराधार आकार रहित कहते हैं जिसकी अपारताका पार ब्रह्मा शिव शारदाशेष नारदादि गुण गांण करने पर भी नहीं पाते हैं ऐसा जो सर्ब ब्यापीक ब्रह्मत्रिभुवन पति है उसने जब किंचित भृकुटीका विलास मायाकी ओर फेरा तो उसीसमय प्रकृति ने गर्भको पाकर मन नामिक पुत्र उत्पन्नकिया जिसको आत्मा भी कहते हैं और मन और आत्मा में शरीरऔर परछाहीं समान कुछ भेद नहीं समझो वही मन संपूर्ण जक्तका राजाहुआ और स्वर्ग नर्क जिसके स्थानहुये तिसके प्रवृत्ति और निवृत्ति नामिक दो रानी हुई तिनमें से

प्रवृत्तिके गर्भसे मोहादिवीर उत्पन्न हुये और निवृत्तिसे विवेकादि सधीरहुये--

रति०--हे पति यह दोनों एकही पिताके पुत्रहैं परंतु किसकारण से इनमें परस्पर बैरबढ़कर अब ये दोनों युद्धको चाहतेहैं--

काम०--हे प्रिया यह सदैव कालकी रीतिं है कि देश कोषके निमित्त भाई भाई से बैर करता है इसका कारण यही है और महाराजाधिराजा जो मन दोनों राजों का पिता है जिसकी आन और बल प्रताप त्रैलोक में सब प्रकार से है तिस मन महाराजके अनुगामी हमारे स्वामी मोह राजा हैं और सदैवकाल अपने मंत्रियों सहित मनही के रुखको देखते रहते हैं जो कुछ इच्छा मनकरते हैं उसको मोहराज उसी समय सिद्धकर देते हैं इसी से मनमहाराज ने मोहको संपूर्ण लोकों की ठकुराई देदी है और विवेकराज मनकी आज्ञामें नहीं हैं इसहेतु बिवेक का निरादर होकर किंचित् प्रभुता मिली और सदैव संपतिहीन रहते हैं-अब मोहराज का बिभव बिलास देखकर ईर्षाबश बिवेक बिनाश चाहते हैं--

रति०--(इसप्रकार बंधुबिरोधसुन रतिहृदयमें पछिताय कोमल बाणी से बोली) हेपति इनके परस्पर बिरोध का ऐसा भारी कोईकारण नहीं था जैसी ये अपनी २ विजय चाहते हैं इसे मनराजके कुलको कोई समयमें विपरीतहै इस बंधुविरोधका परिणाम कुछ अच्छा नहींहै यहविरोध कुल नाशलेनेका मानो अंकुर जमाहै अब हेप्राणपति मुझ को समुझायकर कहिये कि जो आपने कहाहै कि बिवेक बलहीन देश कोष रहित मनुष्योंसे तिरस्कारितहै तो किसके बलसे बैरकरताहै--

काम०--हेरति तुमने जो बातपूंछी उसके समुझनेसे मेराशरीर कांपताहै कहते हैं कि महाराज बिवेक के एक और उप

निषद् नाम स्त्रीहै तिससे ऐसा सुनाहै कि मेरे कुलनाशिक दो बालहोवेंगे अर्थात् पहिली विद्यानामिक कन्या महान राक्षसी भेषसे मोहके कुलको अवश्य भक्षण करेगी उसीका बलपाकर विवेकके मंत्री महान बली होजावेंगे तब समयको पाकर इसरीतसे विवेक राजजीतेंगे--

--(इतनी बातके सुनतेही रतिका पीला मुखहोय नेत्रों से अश्रुपातहोते महान विह्वल अचेत मूर्च्छित पृथ्वीपरगिरपड़ी तबकामने दौड़कर अंकमें भरलिया और हृदय में लगाय समुझानेलगा कि हेप्रिया जिसको सुनकर तुमने इतनी भयमानी उसका अभीतक यही निश्चय नहीं है कि सत्यहै अथवा असत्य तुम वृथा शोच मतकरो क्या जानें ऐसाहोयगा कि नहीं और जबतक मै संसारमें जीता हूं तबतक मोहके दलको कौनजीतसक्ता है——

रति०—हेपति विद्याके दुस्सहगुण सुनकर हृदय कांपताहै अब कहिये उपनिषदसे दूसराबालक कौन लेयगा——

काम०—हे प्रिया तुम श्रवण करो यह संसारमें प्रख्यातहै कि जो छलसे दूसरोंको कूपखनतेहैं वे उसी में गिरते हैं इसीप्रकार विवेक हमारा नाश चाहतेहैं सो वही उसका फल पावेंगे फिर हे प्रिया दूसराबालक दोष सहित मनके कुल रूपी सुंदर कमलों के बनको हिम सदृश प्रबोध चंद्रोदयनामिक महानदुःशील दुर्गुणी उसके जन्मतेही कुलका अंतजानो और मंत्रिन सहित विवेक का भी नाश होजायगा——

रति०—(बिलखाय कर कहती है) सहस्र धिकार है ऐसे कुल को जिसमें ऐसा पुत्र उत्पन्न होय परंतु हे प्रीतम विद्या और प्रबोध चंद्रोदयको आपने दुष्टकहा और साधु जन उनको सुकृती कहते हैं इसको हम कैसाजानें——

काम०—हे प्रिये जिन खोटे पुरुषों का चित्त परदोषमें अभ्यंतर

से मलीन प्रत्यक्ष में उज्ज्वल रहताहै उनका गुण अंतमें उन्हीं को दुखदाई होताहै जिस रीति ओलाकृषीको गलाय आप गलजाता है और जैसे अग्निसे धूम होताहै वही समयको पाकर जल होय अग्निको बुझा देता है (इस प्रकार जब कामने कहा उसी समय में पटके अभ्यंतरसे बिवेक के स्वांग ने रिसायकर काम से यहकहा कि अरे हे मूर्ख गँवार काम तू ऐसा मिथ्या भाषण किस हेतु करताहै अरे हे मलिन कुमार्गगामी तूने संपूर्ण संसार को अंध और दीन कर दिया है और मैं किसप्रकारसे हे मूढ़ बाहिर से उज्ज्वल अरु अभ्यंतर से मलीनहूं और जो कदाच मैं पिताके बचन नहीं मानता यह सत्यहै तोभी संत पुरुष ऐसी नीति कहतेहैं कि मातापिता भाई गुरू स्वामी अथवा कोई भी सजातिहो जो गुण और दोष का ज्ञान न करैं और अपनी हानि औरलाभ को न जानै निज कुलकी मर्यादको त्यागदे कुसंग और कुमार्ग में चलें और जिन पुरुषोंके सतसंग में नर्कादिक होते हैं उनसे जो भयनहीं खाता तिसको पंडित जन कहतेहैं कि शत्रुके समान त्यागदे और यह मन महाराज जो बड़ेके पुत्र हैं तिन्होंने आपा आप बिसराय करकुसंगति धारणकी ओर देख एकमुष्टि मृत्तिका का जो शरीरहै तिसको मन कहता है कि मेरा शरीर अत्यन्तही सुन्दर है जिसके आदि अंत मध्य में दुखका भोग है और जिसको जानने से केवल भस्म विष्ठा और क्रमअंतमें परिणाम दृष्टि आता है और विषयका भोग ऐसा है जैसे दाद के खुजलाने से प्रथम सुख फिर अंतमें दुख होता है परंतु उसी में विश्राम मानता है तिसपर भी अपना स्वरूप त्याग इंद्रियोंके वशीभूत होय कुसंगानुरागी होगया इसमें इसका क्या कामथा किसप्रकार जैसे

सिंहका बच्चा बकरियोंमें रहकर मैंमैं करनेलगा और निज स्वरूपको बिसराय कर उन्हीं के लक्षण धारण कर लिये परंतु यह नहीं समुझता कि ये सबमेरे लक्षण हैं इसी प्रकार यह मन इंद्रियोंके संग भ्रमरूपी बेड़ी से बँधाहुआ निज रूपत्यागं सिंहपुत्र सदृश बकरियों में बकरी हुआ फिरता है और एक बड़ा अपराध हमारा पिता करता है जिसे पिता दुखपाते हैं परंतु उसको नहीं समुझते अर्थात् आत्मा जो हमारा प्रपिता इसमनका पिताहै तिसने पुत्रकेनाते से मनसे अत्यंत स्नेहबांधा है और मनहीं के बशीभूत होय बर्त्तते हैं इसी हेतु अपार संकट और शोच सहताहै इसको दोष नहीं समुझता ऐसा मोहांधकारमें पड़ा है और इसबातको किंचित हीन समुझ कर आत्मा मुझसे दुख सहताहै--

इसीसे मैं पिताको त्यागकर दूर रहताहूं सो हे क्रूर काम कहु मैं किस प्रकारसे मलीन चित्तहुआं--

(इसी समय सभामें जो रतिसहित कामनृत्य करताथा सो सुनकर चकित रहगया और रतिके कानों में कहने लगा कि बिवेक महाराज यही हैं कैसे दुर्बल शरीरसे भी महान काष्टा सहित कैसा कठिन तप करते हैं सो जो बातें मैं तुमसे करताथा उसको श्रवणकरके सुमति नामिकरानी सहित इस भूमिमें आये और ये बड़े कुल में उत्पन्न हुये हैं और हमसे इनकी बड़ी पदवी है इसकारण हमको इनके सन्मुख होना उचित नहीं है इस से यहां से चलो भगचलें)

(इतना कह रति सहित कामको भेषगया और सुमति सहित बिवेक महाराजके स्वरूपका आगमनहुआ)

दोहा--परम पुनीत प्रशस्त अति महा तपोधनरूप। राजहंस जोरी मनो मति से बोले भूप॥ १॥

विवेक०--हे प्रिया यह तमाशा तो देखो काम हमसे कैसी बातें कहकर चलागया है जिसके श्रवणसे दुख और हँसी आतीहै अर्थात् मुझसे तो पिताज्ञाभंग कुमार्गगामी कहता है और अपुनको पितुभक्त सुकृती वर्णन करताहै--

सुमति०--हे महाराज आप तो नीति चतुर वेद शास्त्रादिकनके उत्तम प्रकारसे जनवाहो और इस संसारमें बहुतक पुरुष ऐसे हैं कि जो अपनी कुबुद्धि और अज्ञानता से निज अघको न देखकर सुखी साधुवोंमें देखते हैं कारण कि श्रीकृष्णचंद्रजी को मणिके चोरी का कलंक सोहताथा परंतु जिनके धर्मलज्या नहीं है वे मूर्ख ऐसाही सदा बोल देते हैं और जिनके अपनी ही कर्तव्यकी रीझ-बूझ है वे पुरुष दूसरे का उपदेश नहीं मानते हैं तिस के साक्षीहरि और दुर्योधन हैं और जो कोई चंद्रके ऊपर धूल फेंकताहै वह उलटकर उसीके मुखपर गिरती है इसी रीति वह अपना किया हुआ आप पायेगा और आपका सुयश और प्रताप तो संपूर्ण पृथ्वी पर प्रख्यात है—

विवेक०—हे सुमति तुम देखो यह मुझको परीक्षाहै कि जो परम सुंदर मन महाराज मेरे पितातेजके राशिजक्तके प्रकाशक हैं सो उस अनादि अनंत अगोचर अपार निर्विकार अखंडित प्रकाश सच्चिदआनंद राशि अतर्क अगाधि पूर्णप्रकाश मनसा वाचाकरके अगम्य जिसकी भृकुटीके विलाससे संसार होताहै ऐसेपरब्रह्म परमेश्वरका पुत्रहै सो मन ऐसा उत्तम होकर इसमहान मंद मोहके वशीभूत होकर नट कैसाबट्टा हुआ फिरता है और मनने इस संगति में पड़कर परमोत्तम विभूति को विसर्जन करदीहै और विषय सुख में ऐसा भूला फिरता है जैसे कोई कामधेनुको छोड़कर अर्कंकादोहन करताहो और ऐसा अपने को बिसंराया है कि रंचक मात्रही निजस्व-

रूप को नहीं बिचारते और जो कामादिक मोहके मंत्री हैं वे तो अत्यन्तही दीर्घ पाप करते हैं उनको तो कुछ लज्याभी नहीं है--सो ऐसा निर्मल पुनीत पुरुष जिसकी परम पवित्र शुभ गीता है तिसको मोहने ऐसी अनीति पढ़ाईहै जिसकी विपरीतता बर्णन नहीं करसके और उसी के बशीभूत होने से त्रविधतापादिक संकष्टसहते हैं ऐसा साधुजन कहते और हमभी देखते हैं कि नेत्रहोने पर भी कुछ नहीं देखते सो हम उनको इस दुखसे छुड़ाया चाहते हैं तिस से उसने हमको छली बनायाहै--

सुमति०--हे महाराज जो आपके सुयशकी कीर्त्ति है वह दूसरे राजोंको नहीं सोहती है उसके करने को कामकी क्या सामर्थ है यह तो निज स्वारथी है परमार्थ को क्या जानै और उसमें जो औगुणहैं उनको वह अपने में न समुझ कर साधुओंमें जानता है ऐसा मूर्ख है कि बातोंहीकी रचनाको हृदयमें मानता है और दृगहीन के दोषको न सुनताहै न मानताहै परंतु जो आपने मनका स्वरूप अनूपवर्णन कियाहै और अनंत महिमाहै जिसकाप्रकाश संसारमें फैलाहै तिसने कौन योगकरके मोहके बशीभूत होनेकी मूर्खता की यहगूढ़बात मेरे समुझ में नहीं आती

बिवेक०--हे सुमति तुमश्रवणकरो स्त्रियों की पुरुषों को संगतिही दुखकी दाता है संशयरूपी शूल शोक श्रमादिक जो कुछ है सो संगतिही से होता है और माया के अंश से जक्त में स्त्री है इससे वह अवश्य पुरुषों के चित्त में भ्रम उत्पन्न कर देती है और जब पुरुष स्त्रीका संग पाताहै तब ऐसा क्या अनुचितहै जो उसको नहीं भाताहो और निजस्वरूप जो सुखका मूलहै उसको मायाके संगतिसे भूलगयाहै और दुखके दाता जलसे दिनरात जलकर कोटिन संकट बहुत प्रकार के सहिता है जैसे अत्यंत

पवित्र गंगाजीका जल संसारको पवित्र करताहै परंतु वही कलार का संग पाकर मदिरा होजाताहै—

सुमंति- हे महाराज जो आपने वचनकहे वह प्रमाणिकहै परंतु जो रूपका अपार समुद्र निर्मल उजागरहै और जिसका सहस्र सूर्यके सदृश प्रकाशहै उसके सन्मुख हे महाराज किंचित् माया का अंधेरा क्या करसक्ता है—

विवेक -हे सुमति तुमने जो यह पवित्राचरणकहे सो ठीकहै परंतु उसमायाकेलक्षण श्रवणकरो यहमाया सत्यपुरुषसे अजान दासीहुई तथापि उसका प्रभाव अमित आश्चर्यमयहै जिसका कोई पारनहीं पासक्ता कारण कि वह एकपल में कोटिन ब्रह्मांडको रचकर नाशकर सक्ती है और अनेकन विचित्र चरित्रों गुणकरके संपन्न है तिसे यहआदि पुरुषकी माया सबको भ्रमासक्तीहै और वहपुरुष आद्यंत कैसा स्वच्छमणिसदृश उज्ज्वल अभंग एकरंगहै और जैसे मणिके नीचे श्याम पीत लालहरित जैसा रंग रक्खो उसीप्रकार दिखनेलगतीहै परंतु विचार के दृष्टिसे देखाजाय तो उसके निर्मल ज्योतिमें किसी प्रकार का विकार नहींहै जैसे मुकुरमें सब दिखतेहैं परंतु अैना सबसे अलगहै इसीरीति मायाका संग और रंग उसपुरुषको नहीं लगताहै--

सुमति--हे प्राणवल्लभ आप सर्वज्ञहैं इससे मेरे संदेहको निवारण करिये कि यहजीव उसआदि पुरुष आनंदकी राशि का अंगजहै इसे यहभी अविनाशीहै परंतु किसकारण से मायाने उसको ऐसे सुख समुद्र से विलगकरदिया और संशय सागरमें डालदिया जिसे अनेकन प्रकार के क्लेश सहिता है और एक पलभी विश्रामनहींपाता और व्याकुलतासे ऐसा भ्रमण करताहै कि कहीं स्थल भी नहीं मिलता--

नेत्र चुरायकर लज्जावश होरहेहो इसका क्या कारण है सो कहिये--

विवेक--हे सुमति तुम शुभशिक्षकहो इसे सुनो इसमें जिसकी मुझे चोरीहै उसका नाम लेतेहुये मुझे लज्जाआती है कारण कि मुझको तुम्हारी बड़ी आनहै और स्त्रियोंका यह स्वभाव है कि दूसरी स्त्रीका नामसुननेसे दुःखित होती है--

सुमति--हेमहाराज संसारमें स्त्री दो प्रकारकी होतीहैं एकसात्व-की जो उत्तमहै दूसरी तामसी जो अधमहै उसकाल-क्षण यहहै कि जिसप्रकारसे प्रीतम सुखमानै वैसाही जो यत्नकरै सो तो उत्तमहै और जो पतिसे प्रतिकूलर-हिकर सुखचाहे वह अधमहै और देखिये जिनसे प्रीतम प्यारे सुखपावें उन्हींसे वहसुखमानै और जिसे पतिका हेतुहो उसीसे अपनाहित समझै अर्थात् प्रीतमही की चाहिसे चाहिरक्खे बिनाप्रीतमकी चाहिके किसीसेचाहि नहीं रक्खे और जिनके प्रीतमहीकी उत्तमगतीहै संसार में वही स्त्री उत्तमहै और मेरी मतिमें जो स्त्री पतिसेप्र-तिकूल चलती हैं वहीं पापकीमूल नरककीभागीहैं और हेपति वही पुरुषउत्तम है जो स्त्रीकेवश नहीं है इस्से हे प्यारे आपको मेरे वशहोना उचित नहीं है और मैंतो आपके आज्ञाही मेंहों इससे तू जिसप्रकारसे आपके राज्यकार्य होवे सो आप बेखटके कहिये--

विवेक--(बड़ा सुखमानकर कहतेहैं) हे धर्मज्ञ रानी जो यह बात तुमको उत्तमलगी तो अब मैं तुमसे भेद न रखकर सब भेद यथार्थ कहताहूँ अर्थात् उपनिषद्नामिक मेरे एक और स्त्री है सो बहुतकालहुये जबसे मोहवश मुझ से मानकिये है और अब मुझसे अलग रहकर किसी रीतिसे हमको नहीं मिलतीहै इसका यही यत्नहै कि जो

कदाच श्रद्धा मेरीओरसे उसकेपास जावे और मृदु वचनों से मेरा अभिलाष उसको जनावे और विनतीकर मान छुड़ाय उसको मुझसे मिलादे फिर उसके आनेसे हे प्रिया तुमको मान न होवे और उसके और मेरे रहस्य में किसीप्रकारका विघ्न न पड़े इसीकारण जाग्रत् स्वप्न सुषुप्ति जो तीनअवस्था तुम्हारेस्थानमें हैं इनमें तुम्हारा राज रहकर चतुर्थ तुरीय अवस्था में उपनिषदको लेकर कुछ दिन जो मैं रहूँ तो कर्त्ताकी कृपासे यह आशा है कि अवश्य प्रबोधचन्द्रोदयनामिक पुत्र महान् धीरज्ञानी गुणवान् आनन्दकीराशि शूरवीर सुजान चन्द्रसदृश होगा वही मनकी नींदको मोहरूपी रात्रीसे जगायकर मिटा देगा॥

सुमति–हे नाथ जो इसप्रकारसे शील समुद्र पुत्र उत्पन्नहोवे तो मनआपकेवशहोजाषगा और मैंभीबड़भागिनी होवँगी और हे प्राणप्यारे आपको पिताका उपकार करना उचितहै और मैं तो आपकी आज्ञामेंहूँ इससे शीघ्रही श्रद्धाको उपनिषदके समीप भेजिये सो मनायल्यावे और आप उनसे हठकर प्रीति कीजिये ऐसी नीतिभी हैं और शुभकार्यको विलम्ब न करना चाहिये क्योंकि भीजने पर कमल भारीही होताहै॥

विवेक–(ऐसे वचन सुनकर अत्यन्त हर्ष से कहते हैं) हेसुमति अब जो तुम मेरी सहायक हुईहो तो सम्पूर्ण कार्य विनाही प्रयाससे सिद्धि होजावेंगे और हे प्रिये अब जो यह मन परमात्माका पुत्र निद्रावशहो स्वप्न देखता है इसको ऐसी निद्रा उचित नहीं है यह फल अहंकारकाहै दूसरे मोहभी बहकाता रहताहै तीसरे कामादिक सहाय रहकर मनका जागना नहीं चाहते हैं इसे प्यारी उपनिषद को बुलावें जिसे तुरीय अवस्था वश होकर विद्या

उत्पन्न होतेही मेरे मन्त्री सबल होजावेंगे तब काम क्रोधादिक दुष्टगण जो मनको बहकातेहैं सो मैं निश्चय करके कहताहूँ कि प्रथम इनहींको मारूँगा फिर मोहका नाश करूँगा तबतक प्रबोध पुत्र उत्पन्न होकर मनको जगायेगा जब मन इस निद्रासे जागकर स्वप्न वासना को त्याग करेगा तब अपना निजरूप पहिंचानकर आपा आपको पहिंचानकर अपने पिताको जानेगा और जबसे यह जीव मायासे जन्माहै तबसे अपने पिता के भेदको नहीं जानताहै और यह माया नश्वर खेल खिलाती है तिससे पिताका स्मरण नहीं आता और जगत् पिता जो भगवान् है उनने भी जीवको खेलते जानकर चाह छोड़दी इसी हेतु पितासे बीच पड़गया अब परमात्माकी परमप्यारी जगतहितकारी परमकृपाल जो विष्णुभक्ति है उसीसे जब इनकी सुध देकर उसी के साथ आत्मा को करै जब भक्ति परमात्मा से मिलावै तब अपनी निजमर्यादाको पायेगा जब इसरीति भक्ति इनकोदिखावैगी तब पुत्रकोलेकर पिता कंठसेलगायेगा और पिताकी गोदमें पुत्रबैठेगा तबपरमानंदहोयगा और पिता पुत्रके मिलनेसे दशों दिशोंमें आनंद बधाई होंगी और पिता पुत्रके मिलनेसे नित्यानंदहोयगा और परमात्मा आत्माको कंठसे लिपटायकर पुत्रका सुखमानेगा इसरीति हमने पिताकाहित मोहको सपरिवार नाशकरके निर्माण कियाहै और मैंनेभी ऐसा प्रणकिया है कि जबमन निजस्थानपावै तबनश्वर देहको त्यागकर ब्रह्म में समाय जावै--

सुमति--हे नाथ आपने जो यहमंत्र कियाहै सो मैंनेभी निश्चय करलिया है कि जब आप शरीर त्यागकरेंगे तब मैं निगोड़ी क्या करोंगी इसहेतु विशेष आपहीकेसाथ शरीर

देवँगी। कारण कि आप के विरहसे वियोगाग्नि उत्पन्न होगी इसे यहचरणानुरागी दासी तुरंतही जलैगी--

विवेक--हे सुमति तुमको धन्यहै मुझको तुम्हारा भरोसाहै इससे अब चलकर समाधिकों को तीर्थोंकी ओर बिदाकरैं (इस प्रकार कहिकर विवेक महाराजगये और तंत्रीगण गान करनेलगे)

इति प्रथमो टंक

"भुवदेवदुबे"
गढ़ा कोटासागर

मुंशीनवलकिशोर (सी,आई,ई) के छापेखाने में छपा

अक्टूबर सन् १८९३ ई० ॥

१ जुज ४ वर्क़

श्रीगणेशायनमः ॥

प्रबोधचन्द्रोदय नाटक दूसराभाग ॥

द्वितीयांकः

पात्र नट दंभ दंभशिष्य अज्ञान क्रोध लोभ अहंकार मोह चारवाक तृष्णा हिंसा भरमावती मिथ्या

नट०—(कीर्तिब्रह्म महाराज से) हे महाराज पूर्वाङ्क में जो विवेकने विचार किया उसको सुनकर मोहने भी अपने मंत्रियों को यह आज्ञादीहै कि ऐसा यत्न करो जिसमें विवेक का मंत्र सिद्ध नहोवे (इसीअंतर में परदा के ओट से दंभ का स्वांग यह कहताहुआ बाहिरआया—

दम्भ०--महाराज मोहने मुझ से यह कहाहै कि बिबेक राज उपनिषदनामिक दूसरीरानी से प्रबोधनामिक पुत्र उत्पन्न कर कुल सहित मेरानाश कराया चाहताहै और अपनी फौज भी सबतीर्थों की ओर भेजदी है यह सविधि समाचार मुझसे दुर्बासनाने कहेहैं इसहेतु जो जो योद्धा मेरी जोट के होंय सो आलस्य निद्राको छोड़ बखतर पहिन अपनी २ कमरकसें और शिकल कराय बाढ़खिंचाय शस्त्रोंकोलेकरऐसेचैतन्यरहैंकिजिसमें शत्रु का बलनहीं बढ़ने पावै और प्रथम जायकर सबतीर्थों में अपना डेराडालो और मुझ दंभ नामिक सेवकको यह आज्ञाहुई है कि तुम काशीजी में जाव जो मुक्ति की पुरीहै जहां साक्षात् शिवजी सहित अनेकन सिद्ध साधक रहते हैं उनके जपतपमें विघ्न डालकर उनको वेदसे बिमुख करदेव कारण कि यह स्थान मेरामुख्य है और इसरीतिके बर्तने से तुम्हारा अधिकार अधिक होगा इसहेतु महाराजकी आज्ञानुसार मैंतो काशीजी

कथाके प्रेममें पगाहुआ देखकर कहनेलगा कि देखो यह अपना भेद नहीं जानते कहो तो वेदके पढ़ने से इनकी दृष्टि में क्या आता होगा मेरेजानमें तो जैसे मेढ़क चिल्ला २ कर अपना जन्म वृथा खोताहै परंतु मेघोंको प्रसंन्न नहींकरसक्ता यही रीति इनकीहै देखो जो सुख और भोग प्रत्यक्ष है उनसे देह और मनको खींचकर दूर रहते हैं और जो कहानी सुनी है मूर्ख उसमें निश्चय ल्याकर नेत्रोंको मूंदकर मुक्तिका मार्ग देखतेहैं--फिर आगे चलकर उज्जल भेष निर्मल यानी हंस सदृश बैरागियोंका समूहदेखा कि कोई तो हरीका गुण वर्णन कररहाहै कोई श्रवण करके हृदयमें रखर-हाहै कोई बैठकर कीर्तन करताहै कोई प्रेमानंद समुद्रमें मग्न होरहाहै कोई श्रीकृष्णको रटरहाहै कोई अर्चन बंदन कररहा है कोई प्रभूके चरण कमलों का ध्यान धरके अनेक प्रकारकी सेवा कररहाहैं कोई दास भाव रखकर प्रभूकीइच्छाहीको सर्वोपरि जानताहै कोई सखा भाव मानकर अंतःकरण हरिसे लगारहाहै कोईमनसा बाचा कर्मणा करके श्रीराधाकृष्णपर निछावर होरहाहै इस प्रकार बैरागियों की भक्ति देखकर अहंकार को आगसी लगगई और कहनेलगा कि ये मूर्ख विचार हीन हैं इसीसे यह ऐसे ब्याकुल और भ्रमित रहते हैं कारण कि जो देह प्रत्यक्ष में नित्य है उसको अनित्य नाश मान् जानतेहैं और जो नेत्रों से नहीं दीखता है उसको नीत सहित लक्षकरना कहिते हैं मेरे जान तो यह वृथा आकाशको नापतेहैं और इनपुरुषोंकी जानमें वेदके वाक्यों से भ्रमदूरहोताहै परन्तु मेरेमतमें उन्हींने इनपर भ्रमका जारडालाहै (इतना कहि आगे कूदकर चला और तपस्वियोंको देखकर खूबहँसा और कहिने

लगाकि) देखो यह चोर सदृश बिनाकिये दंड भोग रहे हैं कुछ अन्न वस्त्र नहीं पाते इसीसे तप कररहेहैं और स्त्री आदि जो भोगहैं सो मानों इनके नसीब सें वृथा हैं तिससे यह मूर्ख इसी योग्यहै मानो साक्षात देह धारण किये रोग यहीहैं इनको देखनेसे संतापहोताहै कारण कि यह आपो आपजलरहेहैं (इसरीत हरिभक्तों की निंदा करता हुआ आगे जाय दंभका स्थान देख हर्षको प्राप्तहुआ क्या देखताहैकि) कितनेही दंभी वहां उज्ज्वल भेष बनाकर बैठे हैं कोई अग्नि कुंड स्थापित कर यज्ञकररहा है कोई समाधि लगारहाहै कोई श्रवणों की सुरतको खींच नेत्रोंको छिपाय ध्यानकर रहा है कोई मालाको लिये स्त्रियों में चित्तलगा रहा है और बहुत से लोग वहां आवे हैं सो मानों मूर्तिधारी भोग है और किसी जगह होम होरहा है जिसकी सुगंधि फैल रहीहै और धुलाहुआअत्यन्तही उज्ज्वलस्थान है और सब कोई सिद्धाईको वर्णन कररहा है अर्थात्-जो कुछ कहि देतेहैं वही होताहै और जिसपर स्वामी कृपाकरतेहैं उसके अन्न धन सब बढ़ताहै और जहां से कितनी ही बामोंने पुत्रपालियेहैं और सबके हृदयकी बातजान लेतेहैं (यह देखकर अहंकार वहांपर खड़ा होय कहिने लगा कि जान पड़ताहै कि यहस्थान किसी महापुरुषकाहै और इन्होंने सबै तत्त्वोंका भेद अच्छी रीतसे जानाहै जोअपने शरीरका पोषण करतेहैं यहांपर कुछ दिन विश्राम करकेफिर और दिशाको देखनाचाहियेइतना कहिअहंकार अंदरजायदंभको आशीर्वाद देनेलगा)

दंभशिष्य--(दंभाशिष्य उस ब्राह्मणको पासआतेहुये देख चिल्लाकर कहिने लगे) अरे महंत जीके समीप मतजा दूरही से आशीर्वाद कहु॥

अहंकार--दंभको देख अन खाय कर कहा कि यह कौनसादेशहै और यहां बड़े कठार चित्तके मनुष्य रहितेहैं जो किसी विदेशीका मन भी नहीं लतेहैं ॥

दंभ--तब दंभने अहंकार का समाधान हांससे करके कहा कि इसकादोष दाससे नहींहुआ (फिर शिष्योंसे कहा कि)यहकिसी दूरके देशसेआयाहै जिससे इसने हमारे धर्म का भेदनहीं जाना है अब इससे पूंछो कि तेरी कुलरीति क्या है ब्राह्मण तूही हुआहै कि तेरेबापदादा भी हुये हैं औ इसके हाथ पांव उत्तम जलसे धुलाकर समीपलावतो पूंछें कि तुमको कौनसी पीरहै ॥

अहंकार--तुमको बिदित नहीं है कि मेरा कुल सबके कुलों के ऊपरहै और जो पृथ्वीपर बड़ा स्थान राधानगरहै वहां से आताहूं इतना कहि पगोंपर मार्गकी धूल लिपटा ये हुये दंभकी आकन्नजस भी नं मानकर बराबरीसे आ-सनपर बैठनेको चला ॥

दंभ--(महानक्रोधसे) क्योंरेमूर्ख समुझता नहीं है जो बिना पगधोये मेरेसमीप आताहै अरे अचेत कदाचतेरे वस्त्र का छीटा मेरे वस्त्रपर पड़जावेगा तो फिर मुझे वस्त्रोंस-हित स्नान करना पड़ेगा ॥

अहंकार--(हँसकर) मैं बहुत देशमें भ्रमताहुआ फिरा परंतु ऐसा अभी मैंने न कानों सुना न आंखों देखा ॥

दंभशिष्य--अरे ब्राह्मण तूनहीं जानता कि यहांपर बहुतसे राजा पड़े रहित हैं पर महंतजी के चरण छूने नहींपाते और तुमसरीसे छूंछोंको भला कभी किसी महंतने भी पूंछा है तथापि तुमारे ऊपर महंत ने बड़ी कृपाकी जो तुमसे प्रेम सहित बोले अब तू बकबाद मतकर और दूरही से आशीर्वाददे (इतना सुन अहंकारने मन में अनुमान किया कि ऐसा जान पड़ताहै कि यह दंभ है

और इसने यहाँ बसकर अच्छा किया इतना कहि जब दंभके समीप फिर बैठने लगा तब दंभशिष्य डांट कर बोले) ॥

दंभशिष्य-- अरे ब्राह्मण हमने कईबार तुमको मनाकिया और तू हमारी बात नहीं सुनता इस आसनपर बैठकर महंत जी जप करते हैं इस हेतु इसके सबपैर पड़ते हैं ॥

अहंकार--(बड़ेही अलगर्जतासे) अरे मूर्खहो तुम्हारा महंतहम से बड़ा नहींहै और अभी तुमको हमारी बातज्ञातनहीं है सो बर्णन करताहूं तुम श्रवणकरो देखो मेरी माता नीच कुलमें उत्पन्न हुई है परंतु मैंने ऐसे ऊंचे कुल में बिवाह किया है जैसे मानों हिमाचल है इसकारण मेरी पदबी बापसे भी चढ़बढ़ गई है और जितने ऊँच नीच इस संसार में हैं उनसबों पर मेरा अधिकार है और जितनी मुझको लज्जाहै सो कहिताहूं तुम सुनो कि मेरा एक नतेनीका साढूथा उसका कोई एक मित्रथा उस मित्रकेमित्रके मामाके कोई कन्याथी उसको किसी ने झूंठा कलंक लगाया ऐसा मैंने सुना सोई मुझको इतनी लज्जाहुई कि मैंने मारे ग्लानि के राजकाज धनधाम सब छोड़दिया और ऐसा उठआया ॥

दंभ--एक दिन ब्रह्माजीकी सभाके मध्य में गयाथा सोतुरंतही ब्रह्म देव मुझको देखतेही खड़ेहोगये और सभा में जित ने देवता और सिद्धगणथे सो उनसबों ने दौड़कर मेरे पैर पकड़लिये और मेरे बैठने को सुवर्ण की चौकी रखकर बहुतसी बिनती की तब मैंने कहा कि इसको प्रथमतो अग्नि से शुद्ध करो फिर गंगाजल से धोव तब यहस्पर्श के योग्य होवैगी तब ब्रह्माजी ने वैसाही करके बिनय सहित मुझको बैठाला यह देख संपूर्ण देव चक्रित होकर रहिगये--

अहंकार--(मन में कहाकि दंभतो अच्छा भूंठाहै देखो कहा तो मनुष्य तनधारी है और कहां ब्रह्माजी का स्थान है) फिर कहाकि तूएक ब्रह्मा के आदर से हृदय में नहीं समाताहै यहां तो कोटान कोट ब्रह्मा मेरे पैरों पर पड़े रहितेहैं और सदैवकाल मेरी भृकुटियों को देखते हुये भयभीत रहतेहैं परंतु मैं स्वपनांतर मेंभी उनकी ओर अवलोकन नहीं करताहूं--(तब दंभ ने अपनी बुद्धि से जाना कि यहपुरुष परम उदार मेराप्रपिता अहंकारहै इतना शोच उठकर अहंकार के पैरोंपर गिरपड़ा तब अहंकारने दंभको मुखपोंछ अंकमेंले हृदयसे लगाया और कुशलपूंछ कहनेलगा कि बहुतसमय व्यतीत हुआ जब हे पुत्र मैंने तुमको द्वापर में पाया था तब तुम बालक थे अब तरुणहोगयेहो और मैं वृद्धहोगया इसहेतु मैंने नहीं पहिचाना अब हे पुत्र कहो तुम्हारा पुत्र अनर्थ नामिक कुशल पूर्वक किस ग्राममेंहै और तुम्हारा पिता लोभ तृष्णासहित सुखपूर्वक कहांहै--दंभ-आपके प्रताप से सब मेरेही समीप सुख पूर्वक रहते हैं ॥

अहंकार--हे पुत्रंकहो तो इसनगरी में जो बहुतसे पुरुषदृष्टि आते हैं सो किस रीति हमसे भ्रष्टहोवेंगे ॥

दंभ--आप तो सब जानतेही हो जो सलाह विवेक राजानेकी है कि इसनगरी में बासकरके प्रबोधचंद्रोदय का उदय करें उसके उदय होतेही जो कुछ कुलकी गतीकी विपरीत होयगी सो आप जानतेही हैं और जो आपने इनकईपुरुषों को आतेदेखाहै सो इनको महाबली विवेकने भेजाहै मेरी इच्छाहै कि इनमेंमिलकर ऐसा यत्न करें जिसमें प्रबोधचंद्रोदयका उदय नहोवे ॥

अहंकार--देखो अब विवेक और मोह महाराजों में बैर बहुत बढ़ गया है सो अब परस्पर कृपाण चलने चाहती है ॥

दम्भ--हे पितामह अवश्य यह बातनहीं मिटती है और आप नेभी अच्छी घातकी जो इसनगरी में आये और मोह महाराजनेभी इसनगरीको अपनी राजधानी नियतकी है सो आजकलमें यहां आनेही चाहतेहैं--(अहंकार और दंभकी इतनी बातचीत होतेही मोहका स्वांग परदे के अंदरसे प्रगटहुआ आगे उसकेएकचोबदार आयपुकार कर कहिनेलगा कि सब स्त्री पुरुषहो सावधान होकर सुनो अब महाराजधिराज मोहराज का आगमन होताहै इसहेतु तुमसब शृंगारकर गलियोंकी धूलदूरकर सुगंध सींच गृह२ के दरवाजों को संवारो उसी समय मोहराज सुंदर वस्त्र पहिने रत्नजटित मुकुटदिये छत्र घूमताहुआ बड़ेराजसी ठाटबाटसे जहां दंभादिकथे उसी स्थानपर एक ऊंचे सिंहासनपर आयकर बैठगये और दंभादिकनने दंडवंतकी और सभा जमगई चोबदार बोलनेलगेचमरछत्र होनेलगा तब मोहराजने शोच किया कि संसारको विवेकरहित करदेना है फिर दंभकी ओर देखकर कहा कि कहो इसपुरी के समाचार कैसे हैं॥

दम्भ--(खड़ाहोय हाथ जोड़कर) हे महाराज आपका प्रतापबड़ाभारी है जबसे इसदासका वास यहांपर हुवाहै तबसे आपही की आन फिरती है और सब आपहीकी आज्ञानुसार बरतते हैं कोई विवेककी ओर चित्तनहीं देताहै परंतु कुछ एक पुरुष विवेकको नहीं छोड़तेहैं सो दीनसे पड़े रहिते हैं (इस प्रकार दंभके बचन सुन मोहने सुख माना फिर शिर नीचेकोकर शोच करने लगा के शत्रुके मनुष्योंको निकालही देनाचाहिये अथवा अपने बसीभूत करके इकछत्र राज करना योग्य है ऐसा हँसकर दंभसे कहि फिर विवेकियों को उपदेश करनेलगे॥

मोह–ये मूर्ख हगोंके अक्षत अंध सदृश दिखते हैं यह देहके जीवनको नहीं मानते हैं और जीव और देहकोबिलग मानते हैं जो वस्तु कुछ भी नहीं है उसको निश्चय कहितेहैं और जो प्रत्यक्ष दृष्टिसे दिखताहै उसकोमिथ्या मानते हैं और कहिते हैं कि यह देह पंचतत्त्वों करके रचित है परंतु प्रकाशमान जो आत्माहै सो इससेजुदी है इसका मैंने उत्तम प्रकारसे निरणय करलिया है कि पंचतत्त्वही से संपूर्ण संसार है इसकारण पंचतत्त्वों से कोई दूसरा और नहीं है और अनेक प्रकारसे होकर सुख पाते हैं-और यहदेह देहहीसे प्रगट होतीहै जैसे मनुष्य पशुपक्षी वृक्षादि इनसे यही उत्पन्न होते हैं परंतु इनसे आत्मा दूसरी नहीं है देह और आत्मा एकही है और इस रीतिसे भी कहिते हैं कि यह देहजड़है परंतु आत्मा से चैतन्य है सो यह भाषण जिस प्रकारसे मिथ्या है उसका कारण कहिताहूं सो तुमसुनो जैसे पान सुपारी कत्था चूना आदि सबपदार्थ अलग२ हैं परंतु इनसबके एकत्र होने से लालरंग होजाताहै इसी प्रकार जब ये तत्त्वएकत्र होते हैं तब चैतन्य दिखने लगता है परंतु वास्तविकमें चैतन्य पदार्थ कोई नहींहै और जोआत्मा को अलग कहितेहैं सो सब मिथ्याहै और जोसब लोग कहने लगते हैं कि पृथक् २ धर्मसहित वेदों में चारों वर्णोंका प्रमाणहै सोभी यहभी झूंठहै कारण कि जितने मनुष्य हैं वे सब हाथ पैर नाक कान आदि अंगों से एकहीसे हैं फिर कौनसे चिह्नों से इनको जुदेजुदे कहैं और परस्त्री तथा परद्रव्यके स्पर्शका बड़ा दोष कहिकर बेद डरवाते हैं सो यहभी मिथ्याहै कहो अपने से पराये में क्या भेद है और कहो हिंसामें क्या दोष है मांस भक्षण न करने में क्यापुण्यहै और मांस से मांसकी

वृद्धि होती है इससे इसमें कुछ दोषनहींहै और वेद व पुराणों ने बहुतसे विवेकियोंको ठगकर बावरे करदिये हैं कारण कि वेदोंके बचनोंको प्रमाणिक जान चंद्रवत् स्त्रियादि भोगसे उदासीन रहिते हैं और भुक्ति मुक्ति कहिते हैं पर उसका भेद कुछनहीं जानते मेरेजान मरणही इससंसारमें मुक्तिहै और मरनेही से सबकी गती होती है क्योंकि फिर उसका कोई चिह्न दृष्टि नहीं आता और जो आत्मा कहिते हैं सो दूसरीनहीं है यही पंचतत्त्वहै जो प्रत्यक्ष दृष्टि गोचरहै इन्हीं से जीवनका लाभहै और इन्हींसे खाने पीने रागरंग स्त्री आदिकों का सुखहै और सिद्धांत यह है कि जिसरीति से बने इस शरीरको पुष्टकरे--(इतने में एक चारवाकका स्वांग बनकर आया और एक शिष्य भी उसके साथहै उससे चारवाक कहिंताहै कि हे पुत्र वेदका प्रमाण कभी नहीं मानना चाहिये इसमें कुछभी सारनहीं है--क्योंकि ये कहते हैं कि मरकार बैकुंठको जाता है इसको हृदयमें शोचो कि कैसी मिथ्याबात है कि जो पदार्थ अग्नि में जलजाताहै उससे फल चाहितेहैं यह बड़ीही मूर्खताहै और जो श्राद्ध करते हैं इसको देखकर मुझे बड़ी हँसी आती है कि वह क्या करते हैं ॥

शिष्य– हे नाथ जो वेद मिथ्याहै तो बड़े आश्चर्यकी बात है कि मुनीश्वर संपूर्ण सुख भोग स्त्री आदिक पट्रस खान पान भूषण वस्त्रसुगंधि रागरंग छोड़कर एकाकी वनमेंरहिते हैं और बल्कलांबर विभूति धारणकरके कंद मूल फल अहारकर निर्दोष श्री रामनामको रटतेरहिते हैं और जप तप हवन वेदके अनुसार ब्रह्मजानने के हेतु इसीको सार जानकर बड़े कष्टसहित करतेहैं इसका क्या कारणहै ॥

चारवाक-(हँसकर) वेदका बनानेवाला बड़ाही कौतुकीहै जिस ने संपूर्ण संसारको भुलाय रखा है और ऐसा लालच बनाकर बतलाया है सो मैं तुमसे कहिताहूं सो सुनो जैसे कोई प्यासा मिष्ट जलके समीप बैठाहोय और उसको कोई भुलाकर यह कहि दे कि मैं तुमको उत्तम जल बतलाये देताहूं इस जलमें दुर्गंधि है यहकहि मृग तृष्णाका जल बतला देवै और वह उसको देखकर श्रमपाय हर्षमाने तोइस स्थानपर किंचित विचारकरना उचितहै। देखो कहां तो सुंदर सैयापर नवीन स्त्रीसहित शयनकरना और कहां षटरस व्यंजन छोड़ कंद मूल फल अहारकर बनमें अकेला रहिना और कहांयह कोमल पाटांबर और कहांयह बल्कलांबर और जो कहि तेहैं कि बिषय बिरक्ततासे स्वर्गहै सो उनकोनर्क समान दुख भोगकरते प्रत्यक्ष देखते हैं-(यह वार्ता सुन हृदय में हर्षपाकर मोहने कहाकि यह मनुष्य बड़ाचतुर सुजा न देखपड़ता है तब चोबदारको उसके बुलानेकी आज्ञादी और चारवाकने आकर मोहराज कोजुहारकी॥

मोह-हे चारवाक मैं तुम्हारे बचन सुनकर अत्यंतही प्रसन्न हुवा इससे अब तुम सविस्तर बर्णन करो कि कौनहो और कहांसे आयेहो क्या नामहै॥

चारवाक-(हाथ जोड़कर) मेरा नाम चारवाकहै औरमैं इसडेवढ़ी का आदि सेवक शुभ चिंतकहूँ परंतु इससमय कलियुग ने आपके चरणोंको प्रणामकहि कुछ संदेसा देकर आपके समीप भेजा है कि बहुत प्रकारसे विनय सहित कहियो कि आपकी आज्ञामेरे शीशपरहै परंतु अब जो कुछेक कार्य शेष रहगयाहै उसको करके आपकी कृपा से किंचितसमय पश्चात्आयकरआप केचरण देखूंगा॥

मोह-सविध बर्णन करो कि कितने कार्य बनगये और अब

कितने कार्य बाकीरहे कलियुग ने बतलाये हैं॥

चारवाक–(हाथ जोड़कर) हे महाराज जिसको बेदमार्ग कहिते हैं सो अब किसी प्रकार चलनेनहीं पाती है कारण कि अब सब मनुष्योंने परस्पर प्रीतिछोड़ छलसहित बर्तना प्रारंभ करदिया है और चेला गुरू पिता भ्राता पुत्रादि सब निज स्वारथी होगये हैं और अपनेही पोषण में रुचि रखतेहैं और अधर्म में प्रीति रखकर धर्म कोई नहीं मानताहै और चारोंबर्ण अपनेकर्मोंको छोड़कर अकर्म करते हैं अर्थात् सेवा और खेती तथा बाणिज्य ब्राह्मण करते हैं और शूद्र वेदको उच्चारण करते हैं और कुरु-क्षेत्रादि तीर्थों में जो बड़े बिबेकी थे सो सब निकाल दिये हैं अब वहां आपका ढंढोरा फिर रहाहै और शम दम नेम यमादिक तो आपही से भागगये हैं अब ये इस सेवककी घातसे किसी कामके नहीं रहे इससे अब हेराजन् शोचनहीं रहा और जहां यह आपका सेवक है वहां बोध उत्पन्न नहीं होनेपायगा॥

मोह–(इसरीति कलियुगकी करणी सुन सुख पूर्बक) अब मैंने अच्छी प्रकारसे जानलिया कि कलियुगका बड़ा पुरुषार्थहै और यह भी निश्चय हुवा कि जबतीर्थों में कलियुग ने हमारी आनमानी है तो और भी कार्य सुगमता से शीघ्र सुधार लेवेगा॥

चारवाक-महाराज कलियुगने समय पायकर कुछ और विनय करने को मुझ से कहाहै॥

मोह–कहु कलियुगने और क्या कहाहै॥

चारवाक-हे स्वामी कलियुगने यहविनयकी है कि जितनेकार्य आपने जिस प्रकारसे बतलायेथे वे सब उसी रीति से होगये हैं परंतु अभी जिस स्थान पर चारों वर्णों में विष्णुभक्ति विराजमान है वहां हमारा पराक्रम नहीं

चलता है कारण कि वे सदैवकाल ईश्वर में चित्त लगाय निश्चय प्रेमसे जैसे जक्तके कारण परब्रह्मने पृथ्वीके भारटारनेको अवतारधारणकिये हैं अर्थात् श्रीरामहोय रावणका बधकिया कृष्णहोय कंसकोमारा इसीप्रकार और जो चरित्र जिसभावसेकिये तहां उसी कारणसे ऐसानाम प्रभूकाहुआ जैसे दयासिन्धु गोविन्द गिरिधर मुरारी यशोदासुवन नन्दआंगन बिहारी दशरथसुवन चापखण्डन शिलाशापमोचन निगम नीतमण्डन इत्यादिनामोंसे प्रतिमारच भावसहित अर्चन बन्दनकर नामकीर्तनकरतेहैं और नेत्रोंमें वही कोमल मूर्तिकाध्यानरखतेहैं और उन्हींमें अपनी चित्त कीवृत्तिको इसरीत लीनकरदेतेहैं जैसे मेघोंमें बिजली समायजाती है और प्रेममें मग्नहोय देहकीदशाको बिसराय चरनों नूपुरबांधे नृत्यकरते हैं इसीरीतिको विषय भोगकोत्याग अहर्निशनिबाहतेहैं वहां मैं यद्यपि बहुतसी विघ्नेंकरताहूं परन्तु वे बड़े शूरहैं जो किंचितही मुख नहीं मोड़ते हैं-(इसके सुनतेही मोहको शंकाहुई परन्तु धीर्य्य धारणकर निशंकबोले)॥

मोह- हे मित्रहो यह विष्णुभक्ति की रीतसुनकर कोई मान मतकरो वह सदैव कालसे ऐसी शत्रुताहमसे मानती आईहै अब मेरी ओरके कुछ सेवक कलियुगकी सहायतापाकर उसकोयहां बांधल्यावें अथवा वहींमारआवें फिर असतनामा प्रतिहारसे कहा कि तुम क्रोध और लोभको खबरदेव कि वेदोनों विष्णुभक्ति के पासजाकर उसको यहां पकड़लावें अथवा वहीं पर उसकानाश करदेवें-(इतना मंत्रहोतेही एक पायकका स्वांग आया और उसने मोहराजको जुहारकरके पत्र रखदिया

मोह- तुम कहांसे आये॥

अज्ञान-हे महाराज पूर्वदिशामें समुद्रकेतीर उत्कलदेश अत्यन्त पवित्रहै जहांपर सम्पूर्ण आबाल श्रीपुरुषोत्तमकी पूजन करतेहैं जिनके प्रसादसे मनुष्य उत्तमहोजाते हैं वहांसे आपके मदनामिक योद्धाने इस पत्रकोभेजाहै और मैं सनातनसे आपके गृहका अज्ञान नांमिक पायकहूँ-(तब मोहने पत्री अहंकारको देय पढ़नेकी आज्ञादी)॥

अहं०- महाराज इसमें यह लिखाहै कि यहांसे श्रद्धा अपनी कन्या शान्तिको लेकर चलीगई उसको बिबेकराजने उपनिषदके मनायलानेकोभेजाहै जिसे बोधकीउत्पत्ति हो इसको आपजानतेहीहैं सो रात्रि दिवस उसके समीप बैठ अस्तुतिकरके बिबेक के समीप लैजानेकोचाहतीहै और बिबेकराजका निष्काम नांमिक सखाभी जो परमसुजानहै सहायतापरजाताहै ऐसाजानपड़ता है-(यह सन्देसा मान मदकासुनतेहीं राजाके हृदयमें बड़ाशोचहुआ फिर सम्पूर्ण सभाको शोचमें सभय देख कहिनेलगा)॥

मोंह-हे सकल सैनापतीहो श्रवणकरो तुम सब श्रद्धासे कुछभी भय मत खाव कारण कि जहां तक सृष्टि है वह सब भय भीत मेरेबसीभूतहै वहां श्रद्धाको कहांसे मार्ग मिलैगी जो उपनिषदको बिबेक से मिलायदेवैगी (फिर पायकसे कहा) अरे अज्ञान तुम मेरी बात श्रवणकर के बेगही जाय मदमान से प्रथम तो मेरी कुशलांत कहो फिर कहो कि धर्म निष्कामको बिबेक की सहाय सहित छल बल से पकड़कर यहां भेजदेव और जो बिबेक की उपनिषदके लेनेको श्रद्धागई है उनके भी पकड़नेको पीछेसे सैन्या आतीहै (यह सुन अज्ञान गया फिर असतका संग पाय कहिने लगा कि लोभ और क्रोधभी सहाय सहित आतेहैं उसी अंतर

में पटके अभ्यन्तरसे लोभ क्रोध के स्वांग आय माथा नवाय प्रथम क्रोधने अपना पराक्रम सुनाया) ॥

क्रोध--सुनते हैं कि महाराज भक्तिकी त्रास खाते हैं और श्रद्धा अरु शांति से भी भय मानतेहैं सो हे महाराज जिनके मुझ सरीखे शूरवीर हैं उनकी मरजाद दाबने को बिचारी श्रद्धा और शांतिकी क्या सामर्थहै और मैं जिसके हृदय में जायकर बैठताहूं वह कैसा भी समर्थ क्यों न हो परंतु उसी क्षण उसको अंधा बहिरा गूंगा करदेताहूं और जो कदापि कोई पंडित वेद पुराण का जानकार होय तो उसकी बुद्धि और विद्या अरु चतुराई धुवांही उड़ते दिखलाई देताहै ॥

लोभ--हे महाराज मेरे बस संपूर्ण संसारहै और मृत्यु कोन डरकर सबमेरेही पीछेफिरतेहैंऔर रातदिन यहीविचार करते रहितेहैं कि किस रीत से बहुतसी द्रव्य मिलै और कहितेहैं कि ऐसी मिहनत करें जिसमें गृह द्रव्य से भरलेवें और यह भी कहिने लगतेहैं कि अभी तो इतना जमाकिया है और आगे इतना जमा करूंगा फिर उसद्रव्यको लेकर दूर दिशाको जाय वहांसे माल भरकर दूसरी दिशाको लेजाकर दूना करूंगा श्रद्धा अरु शांति हीन पुरुष रात्रि दिवस यही विचारते रहतेहैं कोई यह कहिताहै कि कमर बांध राजाकी सदैव काल उपस्थित रहिकर ऐसी सेवाकरे कि आज्ञा भंग का दोष कभीनहीं आनेपावे जोकदापि ऐसीभी आज्ञा होवे कि गऊको जोतो और ब्राह्मणका घरलूटलेव तो भी इस आज्ञाको मस्तकपर रखकर बिलंब नहीं करेंगे और जो कदाच कोई सन्मुख हाथभी जोड़ेगा तौभी लड़कर उसको मार निकालेंगे अथवा आप वहां मर जावेंगे इसप्रकार राजाको रिझावेंगे तोबहुतसी जागीरें

पावेंगे ऐसा जो सोचते रहिते हैं उनके हृदयमें श्रद्धा और शांति कहांसे आवेगी कोईकहितेहैं कि धनवान के यहां खांद लगाय द्रव्य चुरालेनाचाहिये कोई कहिताहै कि बटोहीको मारकर लूटलेना चाहिये और भी जो अनेकन यत्नसोचतेहैं सो सबसुझीको लियेहुये सोचतेहैं नृत्य गान पढ़ने पढ़ाने चौदा विद्याके सीखनेंमें मेराही आश्रय लियेहैं और जितने शरीर धारीहैं उन सबको मैंने अपने बसमें कर लिये हैं जब वे ऐसेही शोच में अपनी आयुष्यको व्यतीत करतेहैं तब श्रद्धा से स्वपने में भी भेटनहीं होने पाती फिर शांतिको किसरीत पाय सक्ते हैं॥

क्रोध-(सन्मुख खड़ाहोकर) हे राजन आप मेरे बल और पुरुषार्थको नीकी प्रकारसे जानते हैं इस हेतु मैं बहुत कुछ बर्णन नहीं करताहूं देखिये यद्यपि बिश्वामित्र जी परमपवित्र क्षत्रीथे तिनने मेरेबस होकर बड़ाभारी दोष ब्राह्मण बधका न मान बिचारको छोड़ बशिष्ठ ऋषीके एकसौ पुत्रोंको मारडाला दूसरे इंद्रजो सुरपति हैं तिन्होंने भी मर्यादको छोड़ बृत्रासुरादि दोनों ब्राह्मणोंको अपने हाथसे बधकिये तीसरे सबके पूज्य पिता ब्रह्माजीका शिर शंकरजीने बिचारको छोड़धड़ से त्रिशूल द्वारा काटकर अलग करदिया सो हे नाथ यह सब पराक्रम मेरी भुजानका है जिसके बश्य ब्रह्मादिक देवता हैं तो इतर मनुष्यों की क्या गणना है यद्यपि कोई गुणज्ञ विवेकी पंडित भी होय तो भी मेरे बस होतेहीं सम्पूर्ण सुधबुध भूल अधर्मी होजाताहै॥

लोभ-(तब लोभने अपनी स्त्री तृष्णाको बुलाया और उसका स्वांगपटके अभ्यंतर प्रगटहो नृत्यकर सुननेलगी)

तेहैं कि विवेकके कारणसे मोहराज के हृदयमें बड़ा शोच उत्पन्नहुआ है तिससे हे सुमुखी मैं अपना हाल तुझसे कहिताहूं कि जो यह संपूर्ण सांसारिक संपत्ति चौदा भुवन और लोकलोकों में वर्णनकी है उनसबसे मेरा उदर इतना बड़ा है कि पूर्ण नहीं होता है और मेरा प्रतापरूपी मेघ ऐसा छायरहा है कि जिसे समादिक नक्षत्र व बोधचंद्र किंचितही दिखाई नहीं देते हैं॥

तृष्णा--हेनाथ जो आपने अपनी कथाकही है सो सत्यहै और जिसप्रकार आपके प्रतापरूपी जाल में मत्स्य तुल्य संसार फँसरहाहै तौभी इस आपकीदासीका भी कोईअंत नहीं पाताहै मेरा उदर इतना भारी है कि जो कदाच कोई कोटिन ब्रह्मांड एकत्रकर उसमें डालदेवै तो भी किंचित थाह नहीं मिलेगी जैसे कोई अग्निमें कितनाही क्यों न जलावे परंतु उसको संतोष नहीं है उसी रीत दिनप्रति मैं बढ़तीजातीहूं फिर वहां श्रद्धा और शांति कैसे आयसक्ती हैं--(उसी समय क्रोधने हिंसाको बुलाया सो पट अंतरसे बिकराल रूपसे आय मृत्यु समान भयानक स्वांगसे नृत्य करनेलगी फिर क्रोधने कहा)॥

क्रोध--हे प्रिया तू जानती है कि संसार मुझसे कैसा डरता है परंतु बहुत काल में मोहराज ने आज हमको बुलाया है सो जो तुमभी सहाय करो तो महाराजके सब कार्य सिद्ध होजावें इसहेतु लोक वेदके यश अपयश और संशय शोच सकोच बिचारादिको छोड़ कोई होय उसको बधकरो॥

हिंसा--हे स्वामी आप मुझको अपनी आज्ञानुगामनी जानैं और माता पिता ब्राह्मण कोई भी होय आपकी आज्ञा

से तुरंतही मारोंगी और खगमृग जलचर कीटपतंगादि कों के शरीरको तो सहजही में भंग करसक्ती हौं और जिसके हृदयमें ज्ञान भी बसता होय उसको भी मैंही हितकारकहूं—(इसरीति जब चारोंने बार्ताकी तब उन को मोहने आज्ञादी)॥

मोह—तुमचारों बंग देश को जाव और बनपड़े तौ श्रद्धा और शांतिको छलबल से मारो और चैतन्यता से अपनाकार्य करियो—(इतना कहि उनको बीरा देय बिदाकिया सो जुहार कर सभा से बाहरचलेगये फिर मोहराज बहुत ही चिंता बढ़ीके श्रद्धा बुद्धि और बल से पुष्ट है इससे जो मेरी मिथ्या दुष्ट नामिक स्त्री बली और छलकारिक है उसको भेजूं तो वह अवश्य जाय उपनिषदके समीप से श्रद्धाको पकड़ लेवे और बांध कर मेरे समीप ल्यावै तो शांति जो अत्यन्तही सुकमार है श्रद्धा के बिरहसे दुखपाय सहजही बिना मारी मरजायगी ऐसा बिचार कर भरमावती सहचरी को तुरंतही बुलाया सोई बिचित्र स्वांग बनाय पट अंतर से भरमावती आयगई तब राजाने उसको आज्ञादी कि तुम शीघ्रही मिथ्या के समीप मेरा अभिलाष जनाय आदर पूर्वक मनाय ल्याव इतना सुन सहचरी पटांतरमें मिथ्या के स्वांग के समीप जाय बंदन कर मोहराज का संदेशा कहिने लगी ॥

भरमावती—हे प्रिया तुमको राजाने बड़ी अभिलाष सहित बुलायाहै और कोई कार्यभी है इस हेतु तुमचलो ॥

मिथ्या—हे सखी बहुत काल हुआ जब से मैं राजासे न्यारी रहीहूं इसहेतु अब मुझको जाने में भारी लज्याहोती है कि किस प्रकारसे राजाके समीप जाऊं और पूछने से क्या उत्तर दूंगी इतना कहि—(अंड़ाई ली और

अंगको मोड़कर जमुहाई लेय नेत्र उनींदे कर लिये और अंगों में आलस्य जनाया) ॥

भरमावती—हे प्रिया किस कारण तुमारे अंग शिथिल हो आलस हुआ ॥

मिथ्या--हे सखी जिस स्त्रीकी एकपती से प्रीति होती है उसको आलस और नींदनहीं आती है मेरी सदैवकाल बहुत पतियों से रति रहती है इस हेतु एकक्षण भी मुझको सावकाश नहीं मिलता इसीसे नींद आती है ॥

भरमावती-हे प्रिये जो जो तुमसे प्रीति मानते हैं उनके नामकहो॥

मिथ्या--(हँसकर) हे सखी प्रथम तो मोहराज हैं दूसरे काम ३ क्रोध ४ मद ५ मान ६ दंभ ७ लोभ ८ मत्सर आदि जो जो प्रवर्ति कुलमें है वहसब मुझसे प्रीति रखकर मेराही सुख चाहिते हैं ॥

भरमावती--हे प्रिये मोहराजके ईर्षा नामिक स्त्री है अरु कामके रति है लोभकी तृष्णाहै क्रोधके हिंसाहै कलियुगके दुर्गतिहै सो ये सब अपनी २ स्त्रीसे प्रीति रखते हैं फिर तुम से किसकारण रति मानते हैं सो वर्णनकरो ॥

मिथ्या--हे सखी यद्यपि सबके गृहमें स्त्री है परंतु मेरी मनमोहनी छबिपर संपूर्ण संसार मोहित होरहाहै इससे अपनी सुध बुध बिसराय बिनाबिचार मुझसे रमते हैं ॥

भरमावती-(आशीर्वाद देकर) हेप्रिये ईश्वर तुम्हारी प्रीति दिन दिन दूनी सबपतियोंसे बढ़ावे अब शीघ्रही चल महाराज तेरी बाट ऐसे देखरहे हैं जैसे चंद्रोदयको चकोर चाहिती है (ऐसी कहि दोनोंपट अंतर बातेंकर सभा में आयनृत्य करनेलगीं)॥

मोह--(इस सुंदर स्वांगको देख हर्ष सहित) हे प्रिय प्राण प्यारी आज पर्यंत तुम बिनै मैं दुखी था अब तुम्हारा आगमन सुखकारी हुवा (यहकहि आदर सहितगोद

में बैठाल चूमकर दृढ़ आलिंगन किया तब सलज्या बैठमान से बोली ॥

मिथ्या–(मुसक्याकर) मुझे किस कार्यको बुलाया है॥

मोह–हे भामिनी तुम अच्छी प्रकारसे जानतीहो कि मेरे संपूर्ण कार्य तुम बिना फीके थे इससे तुम सदैव मेरे हृदयमें बसतीहो एक क्षण भी नहीं भूलती हो और जिस हेतु मैंने बुलायाहै सो मानो आज वह सब कार्य होगया मैंने सुनाहै कि श्रद्धा शांतिसहित उपनिषदके समीप गईहै इसहेतुके उसको बिबेकसे मिलाय बोधका प्रकाश चाहितीहै उसके उदयहोतेही कुलका नाश हो जायगा इससे चिन्ता बहुत है इस कारण हे प्रिया तैं वहां जाकर छल बलसे पकड़ चोटीधर यहाँ लाव तौ वह बन्दीगृहमें रहे जिससे हमारा क्लेशमिटै॥

मिथ्या–हे राजन यह कौन बड़ाकार्यहै आपके प्रतापसे मिथ्या शास्त्ररूपी ऐसा उपाय है कि उसको अभी बांधकर पाखण्डमें रखतीहूं जिससे बिबेक को भी संभार न रहै और जो उपनिषदका चन्द्रतुल्यप्रकाश है उसको अस्त किये देतीहूँ फिर श्रद्धाकी कितनी बात है ॥

(ऐसासुन मोहहर्षकोपाय हृदयसेलगाय कहिनेलगा)

मोह–हे प्यारी तू बुद्धि बल साहस सहित चतुर है इस हेतु सब प्रकारसे मुझे निश्चयहै कि जो कार्य मुझसे नहीं होगा वह तुमसे होजायगा (ऐसा कहि हर्ष सहित प्यारी रम्भाकहि मुखचूम कुचको स्पर्शकिया तब)॥

मिथ्या–हे राजन सभाके बीच ऐसा करने से लज्जाआती है इसे जो कदाच आपकी ऐसीही इच्छाहोय तो सुख दाइक रंगमहलको चलिये ॥

(यह मिथ्याके बचन सुनकर मोहराज इस ख्यालको पूर्णकर शयनको चला ॥ इतिद्वितीयअंकः ॥

नागरी अक्षरों के जाननेही मात्र से धर्म्म ग्रंथों को अच्छे प्रकारसे पढ़कर अपने वर्णाश्रम धर्म्मको भली भांति जानजायँगे इत्यादि अनेक कारणों को शोच कर और अपने धर्मको अत्यन्त शोचनेके योग्य दशा में देखकर परमकारुणिक धर्मधुरीण भार्गववंशावतंस मुंशी नवलकिशोर (सी, आई, ई) ने सकल लोको-पकारार्थ अपने ही व्ययसे धर्मशास्त्रज्ञ पण्डित वर मिहिरचंद्र मैनेजर भारतबंधु प्रेस अलीगढ़ के द्वारा अष्टादश स्मृतियों का अत्यन्त सरल हिन्दी भाषा में प्रतिश्लोक का यथार्थ अनुवाद कराकर सुंदर कागज तथा श्रेष्ठशीशे के अक्षरोंमें मूल सहित मुद्रित कराया है इन स्मृतियोंके कर्ता अत्रि-विष्णु—हारीत—उशना—अंगिरा— यम—आपस्तम्ब— संवर्त— कात्यायन— बृह-स्पति— पाराशर— व्यास— शंख— लिखित— दक्ष—गौतम— शातातप और वशिष्ठ यह १८ महर्षि हैं इन स्मृतियोंमें ब्राह्मणादि चारों वर्णोंके धर्म— ब्रह्मचर्यादि चारों आश्रमों के धर्म— नित्य नैमित्तिक धर्म— कृच्छ्र चान्द्रायणादि व्रत— श्राद्धादि कर्मोंके योग्य ब्राह्मण—प्राणायामादि विधि—गुरु सेवाकी विधि— पुंसवन से लेकर अन्त्येष्टि पर्य्यन्त सम्पूर्ण संस्कार—आठो प्रका-रके विवाह— सतयुग को आदि लेकर चारों युगों के अलग अलगधर्म— चारोंवर्णोंकाआचार—स्वधर्मनिष्ठ ब्राह्मणादि की स्तुति और स्वधर्मरहितोंकी निंदा तथा सम्पूर्णपातकोंके जुदेजुदेप्रायश्चित्तइत्यादि अनेकधर्म वर्णितहैं यहधर्म्मपुस्तक संपूर्ण सनातनधर्म्मावलंबियों को रखनी चाहिये जिस्से कि वहसम्पूर्णसन्देहोंसेनिवृत्त

होकर अपनेअपने धर्मोंकोसरलतासे जानसकें इसकी नौछावर सबको सुगमताके लिये केवल २॥) इतनीही नियत की है ॥

सफ़ह ६८२ अर्थात् ५८ जुज़ ७ वर्क की० २॥)

अलावमहसूल डाक ॥

इसके सिवाय सम्पूर्ण सनातन धर्म्मावलंबियों को यहभी विदितकराया जाताहै कि उक्त मुंशीजीने लोकके उपकारार्थ और हिन्दी भाषाकी उन्नातिके लिये अनेक शास्त्रज्ञ विद्वानों के द्वारा मनुस्मृति ५४ जुज़ ६ वर्क की० ५) याज्ञवल्क्यस्मृति १० जुज़७वर्ककी० ।=)मिताक्षरातीनोंकाण्ड१२७जुज़ १वर्ककी० १०)औरभिन्न भिन्न काण्डभी मिलतेहैं अर्थात् आचारकाण्ड२०जुज़ १वर्क की० ३)व्योहार काण्ड ५५ जुज़४वर्ककी० ५।) प्रायश्चित्तकाण्ड ५१ जुज़४वर्ककी० ५) और निर्णयसिन्धु सय टीकाभाषाकी० ५) आदिधर्मशास्त्रग्रंथोंका भी बहुत से व्ययसे अनुवाद कराकर पुष्ट काग़ज़ तथा सुन्दर शीशकाक्षरों में मूलसहित मुद्रित कराया है यह सब ग्रंथ मतबअ अवध अख़बार लखनऊमें मिलते हैं जिन महाशयों को इनके मूल्यादि का निश्चय करना हो वह केवल =) का टिकट भेजकर इस मतबे की फेहरिस्त मँगाकर देखलें ॥

मुन्शीनवलकिशोर अवधसमाचार संपादक
लखनऊ हजरतगंज ॥